thearyasamaj.org

ओ३म्
आर्य जगत्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 08 फरवरी 2015 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार 08 फरवरी 2015 से 14 फरवरी 2015

मा.कृ. 04 ● वि० सं०–2071 ● वर्ष 79, अंक 143, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 191 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,115 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

बी.बी.के. डी.ए.वी. कॉलेज फॉर विमेन, अमृतसर में नववर्ष के शुभारंभ पर 'वैदिक हवन यज्ञ'

नववर्ष की पावन बेला पर बी.बी.के. कॉलेज फॉर विमेन, अमृतसर के उर्वी सभागार में आर्य युवती सभा द्वारा 'वैदिक हवन यज्ञ' का आयोजन किया गया। जिसमें विशेष अतिथि बलजीत सिंह (ऑफिसर एवं इन्चार्ज पुलिस कम्युनिटी सेंटर), सं सतिंदर बीर सिंह (जिला शिक्षा अधिकारी, अमृतसर), कॉलेज प्राचार्या डॉ. श्रीमती नीलम कामरा, टीचिंग एवं नॉन टीचिंग स्टाफ एवं छात्राओं द्वारा उस सच्चिदानंद परमात्मा से नववर्ष में समस्त बुराईयों के नाश तथा सम्पूर्ण राष्ट्र की आत्मिक, शारीरिक और मानसिक उन्नति की प्रार्थनाएँ की गई। कॉलेज प्राचार्या ने अध्यापक वर्ग को सम्बोधित करते हुए कहा कि 'शिक्षकों का मूल कर्त्तव्य है कि छात्राओं को ज्ञान–विज्ञान की शिक्षा के साथ–साथ नैतिक–मूल्यों की शिक्षा भी अवश्य दें ताकि देश का भविष्य उज्ज्वल बन सके। आगे उन्होंने कहा कि डी.ए.वी. एवं आर्य समाज संस्थाओं द्वारा निरन्तर वैदिक हवन यज्ञ करने का मूल उद्देश्य प्रदूषित समाज एवं पर्यावरण को शुद्ध करना है ताकि सारे संसार को सुखी बनाया जा सके। उन्होंने यह भी बताया कि लड़कियों को आत्म–निर्भर बनाने हेतु कॉलेज में कई कोर्स चल रहे हैं।'

सं. बलजीत सिंह रंधावा ने स्टाफ, छात्राओं और एन.एस.एस. वोलन्टियर्स को नववर्ष की हार्दिक बधाई दी और पुलिस सुविधा केन्द्र की जानकारी देते हुए छात्राओं को वहाँ से कई सुविधाएँ प्राप्त करने का आश्वासन दिया। सं सतिन्दर बीर सिंह ने उपस्थिति को नए वर्ष की शुभकामनाएँ दी और अपने सम्भाषण में कहा कि 'हम सबने यज्ञ में भगवान से इस वर्ष को मंगलमयी करने की प्रार्थना की है' वह तभी पूर्ण हो सकती है यदि हम सब मिलकर मंगलमयी कार्य करेंगे।

कॉलेज प्राचार्या और गणमान्य अतिथियों ने इस नववर्ष के स्वर्णिम आगमन पर एन.एस.एस. का स्पैशल कैंप जो प्रत्येक वर्ष गाँव किला–जीवन सिंह के सामाजिक–उत्थान–हेतु लगाया जाता है, उसका उद्घाटन भी किया। इस कैंप को कार्यक्रम अधिकारी प्रो. जसप्रीत बेदी, प्रो. सुरभि सेठी, डॉ. श्वेता, प्रो. राधिका और एन.एस.एस. वोलन्टियर्स अगले सात दिन गाँव किला जीवन सिंह में कार्यान्वित करेंगे।

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल वैस्ट पटेल नगर नई दिल्ली में मनाया गया वार्षिक दिवस

सांय 4.45 बजे से डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल पटेल नगर नई दिल्ली में प्रधानाचार्या रश्मि गुप्ता जी की अध्यक्षता में वार्षिक दिवस 'नमामि गंगे' का आयोजन किया गया था। इस कार्यक्रम के मुख्य अतिथि डी.ए.वी. कालेज मैनेजिंग कमेटी की डायरेक्टर श्रीमती निशा पेशिन, उत्तरी –दिल्ली के मेयर श्री योगेन्द्र चन्दोलिया जी पाठशाला के चेयरमैन श्री रविन्द्र कुमार तथा मैनेजर श्री जी. आर. साहनी थे। डी.ए.वी. संस्थाओं के अनेक प्रिंसीपल भी इस कार्यक्रम में उपस्थित थे। वार्षिक दिवस में नन्हे मुन्ने बच्चों का रंगारंग कार्यक्रम, नृत्य, संगीतमयी लघुनाटिका, योगाभ्यास तथा जूडो–कराटे कला का प्रदर्शन किया गया। वार्षिक पुरस्कार वितरण किया गया तथा मुख्य अतिथिगण द्वारा पाठशाला की मैगजीन 'विविधा' विमोचन किया गया। कार्यक्रम का मुख्य आकर्षण 'नमामि गंगे' नृत्य नाटिका थी जिसमें मां गंगा के अवतरण से लेकर गंगा की अस्वच्छता को दर्शाया गया था तथा अंतिम दृश्य में नृत्य नाटिका द्वारा गंगा स्वच्छता अभियान तथा पर्यावरण सुरक्षा हेतु बच्चों ने प्रण किया। लगभग 650 बच्चों ने इस कार्यक्रम में भाग लेकर दर्शको का मन मोह लिया। भारी संख्या में दर्शकों ने बच्चों का उत्साहवर्धन किया तथा कार्यक्रम की भूरि–भूरि प्रशंसा की।

हंसराज विद्यालय में विश्वशांति के लिए हवन का आयोजन

प्राचीन भारतीय परंपरा के अनुरूप विश्वशांति के लिए महात्मा हंसराज विद्यालय की ओर मौजूदा हालात के अर्न्तगत मकान नंबर 215, सैक्टर–17 के सामने वाले पार्क में हवन का आयोजन किया गया।

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल पंजाब क्षेत्र के निर्देशक श्री विजय कुमार इस अवसर पर मुख्य वक्ता थे। उन्होंने दैनिक जीवन में नित्य हवन के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए लोगों को दैनिक हवन के लिए प्रेरित किया क्योंकि इस से न केवल मन की शुद्धि होती है अपितु पर्यावरण भी होता है। हवन में शहर के निवासी भारी संख्या में उपस्थित थे।

प्राचार्या श्रीमती जया भारद्वाज जी ने कहा मौजूदा समय में जबकि पूरा विश्व आतंकवाद, प्रदूषण तथा अशान्ति जैसी समस्याओं से जूझ रहा है, विश्व को शांति का संदेश देना तथा दिशा में प्रयत्न करना हमारा कर्त्तव्य है। इसी कड़ी में हम स्वामी श्रद्धानन्द जी को भी उनके बलिदान दिवस पर नमन करते हैं, जिन्होंने इन्हीं सामाजिक कार्यों के लिए बलिदान दिया। प्राचार्या जी ने सभी उपस्थित जनों को भी धन्यवाद दिया।

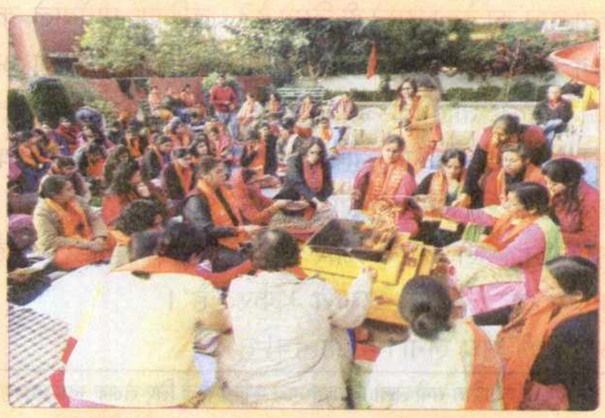

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – पूनम सूरी

theraryasamaj.org

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार 08 फरवरी, 2015 से 14 फरवरी, 2015

यज्ञ रचा, दान कर

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

न त्वां शतं चन हुतो, राधो दित्सन्तमामिनन्।
यत् पुनानो मखस्यसे।।

ऋग् ९.६१.२७

ऋषिः **अमहीयुः आङ्गिरसः।** देवता **पवमानः सोमः।** छन्दः **गायत्री।**

● (हे आत्मन्!), **(राधः)** धन को, **(दित्सन्तं)** दान करना चाहते हुए, **(त्वा)** तुझे, **(शतं चन)** सौ भी, **(हुतः)** कुटिल वृत्तियाँ व कुटिल जन, **(अ आमिनन्)** हिंसित अर्थात् मार्ग–च्युत न कर पायें, **(यत्)** जब, **(पुनानः)** (स्वयं को) पवित्र करता हुआ। (तू), **(मखस्यसे)** यज्ञ रचाता है।

● हे पवमान सोम! हे स्वयं को तथा मन, बुद्धि आदि को पवित्र करने वाले सात्विक–वृत्ति जीवात्मन्! जब तू परोपकार का यज्ञ रचाता है और अपना धन किन्हीं सत्पात्र व्यक्तियों को या संस्थाओं को दान देने का संकल्प करता है, तब बहुत–सी कुटिल स्वार्थ–वृत्तियाँ और बहुत–से कुटिल मनुष्य तेरे उस दान–व्रत की हिंसा करना चाहते हैं और तुझे दान के मार्ग से विचलित करने का प्रयत्न करते हैं। स्वार्थ–वृत्ति कहती है कि सहस्त्र, दश सहस्त्र, पचास सहस्त्र, लाख, दो लाख रूपया तुम अन्यों को दान कर कर रहें हो, तो क्या स्वयं भूखे मरना चाहते हो? देखो, सब अपनी सम्पति बढ़ा रहे हैं; जो सहस्त्रपति है वह लक्षपति बन रहा है, जो लक्षपति है वह करोड़पति बन रहा है। उनके पास कई–कई कोठियाँ हैं, मोटरकारें हैं, सेवक हैं। क्या दान का ठेका तुमने ही लिया है? क्या तुम्हारे ही भाग्य में यह लिखा है कि स्वयं तो मोटा–झोटा पहनो, रूखा–सूखा खाओ, झोपड़ी जैसे मकानों में रहो और दूसरों पर धन लुटाओ। पहले अपनी और अपने कुटुम्ब की स्थिति सुधारो, फिर अन्यों की सुध लेना। हे आत्मन्! तू उस स्वार्थ–वाणी को मत सुन। तुझे दान करने के लिए उद्यत देख कई स्वार्थी परिचित मनुष्य भी आकर मिथ्या ही आलोचना करते हैं कि तुम जिस संस्था को दान करने जा रहे हो, उसकी आन्तरिक अवस्था को भी जानते हो? उनमें सब खाऊ–पिऊ बैठे हैं, तुम्हारा दिया हुआ दान उन्हीं के पेट में जाएगा। हे आत्मन्! तू उन उन स्वार्थी जनों के भी कुटिल परामर्श पर ध्यान मत दे। सौ प्रकार की स्वार्थ–भावनाएँ और सौ स्वार्थी–जन भी तुझे तेरे दान के संकल्प से विचलित न कर सकें।

हे मेरे आत्मन्! वेद–शास्त्रों की वाणी सुन, जो तुझे दान के लिए प्रेरित कर रही है। तू अपनी कमाई में से प्रतिदिन या प्रतिमास कुछ निश्चित प्रतिशत दान–खाते में डाल और उसे लोक–कल्याण में व्यय कर। दान से दक्षिणा पानेवाले का तो हित होता ही है, उससे भी अधिक हित और मंगल दाता का होता है, यह वैदिक संस्कृति की भावना है। इसके विपरीत, "अकेला भोग करनेवाला मनुष्य पाप का ही भोग करता है"। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

एक ही रास्ता

● महात्मा आनन्द स्वामी

पिछले अंक में बात हो रही थी कि अटल विश्वास जिसके हृदय में है, वही परमात्मा की उपासना का अधिकारी है। यम और नचिकेता की कथा सुनाते हुए कहा कि यम ने अपने घर में आए मेहमान से तीन वर मांगने को कहा। नचिकेता ने दो वर मांग लिए, अपने लिए नहीं अपितु दूसरों के लिए। यम ने कहा,'कुछ अपने लिये भी तो मांग।' नचिकेता ने कहा मेरे लिए ही वर देना चाहते हो तो बताओ की ईश्वर किसे कहते हैं? यम ने कहा, यह न पूछ। कोई और वस्तु मांग ले। मैं तुझे अपार धन–दौलत दे सकता हूँ, सुन्दर स्त्रियां दे सकता हूँ, भोग–विलास के समान दे सकता हूँ। परंतु नचिकेता ने कहा,'यह सब कुछ मुझे नहीं चाहिए। यह सब नाश होने वाला है। मुझे वह दे जो कभी नाश नही होता। अंत में मरना है। मरने के बाद तेरे चंगुल में न फंसूँ, वह मार्ग बता।'

यह जब किसी भी रीति से उसके हठ को दूर नहीं कर सका तो वह बोला कि सब वेद जिस महान पद का वर्णन करते हैं, सब तपस्वी जिसकी बातें कहते हैं, जिसकी इच्छा से ब्रह्मचारी अपने व्रत को धारण करते हैं, वह है 'ओ३म्'। वास्तव में यही वह अक्षर है जो ब्रह्म है। निश्चित रूप से यही अक्षर परब्रह्म है। इसको जानने वाला सब कुछ पाता है, जिसकी वह इच्छा करता है। इसका आसरा सबसे बड़ा है। इसका आसरा ऊपर है। इसका आसरा लेने वाला ब्रह्मलोक में आनन्द और महिमा प्राप्त करता है।

अब आगे...

दुनिया में हमें बहुत सारे सहारे दिखाई देते हैं, परन्तु ये सब सहारे जानेवाले हैं। फिर इनमें से मनुष्य किसका सहारा ले? क्या धन और दौलत का? हमने देखा धन और धान्य रहता नहीं, चला जाता है, या जब मनुष्य चला जाता है, धन–धान्य इसके साथ नहीं जाता। तब क्या कपड़ों और मकान का सहारा लें? ये भी तो रहते नहीं। कपड़े फट जाते हैं, मकान टूट जाते हैं; कई बार वे सब खड़े रहते हैं, जानेवाला चला जाता है। तब क्या पति–पत्नी, पुत्र और सम्बन्धियों का सहारा लें? वे भी नहीं रहते। वे स्वयं अपने लिए सहारा ढूँढते–फिरते हैं। तब क्या मोटर और गाड़ियों का, जहाजों और सवारियों का सहारा लें? वे भी नहीं रहते। शरीर नहीं रहता, स्वास्थ्य नहीं रहता, कुछ भी तो नहीं रहता, यह सब नष्ट होनेवाला है। तब किसका सहारा लें? किसको अपनाया जाए?

किस सँग कीजे मित्रता, सब जग चालनहार।
निश्चय केवल है प्रभु, उससे कर लो प्यार।।

प्रभु ही सदा साथ देता है, एक क्षण के लिए भी नहीं छोड़ता। और वह है ओ३म्। मुण्डक उपनिषद् के दूसरे मुडण्क का दूसरे खण्ड का छठा मन्त्र है–

ओमित्येवं ध्यायथ आत्मानं स्वस्ति
च पाराय तमसः परस्तात्।।

'इस आत्मा का ध्यान ओ३म् के रूप में करो । तब तुम्हारा कल्याण होगा। घने–से–घने अँधेरे को दूर करने का यही एक साधन है। इस साधन को अपनाओ। तुम्हारा कल्याण होगा। अन्धकार टुकड़े–टुकड़े हो जायेगा। अनन्त ज्योति जाग उठेगी।' यह बात केवल मुण्डक उपनिषद् ही नहीं कहती, सभी उपनिषद् कहती हैं। छान्दोग्य उपनिषद् में, माण्डूक्य उपनिषद् में और कितने ही दूसरे शास्त्रों में ओ३म् की महिमा का वर्णन है।

कई सज्जन कहते हैं, 'ओ३म्' की महिमा तो हमने समझ ली; इसका ध्यान करने से कल्याण होता है, यह भी जान लिया; परन्तु ध्यान कैसे करें? आज यह बताऊँगा। ध्यान से सुनिये! सूक्ष्म बात है यह। ध्यान से सुनोगे तो आपको पता लगेगा कि ओ३म् के द्वारा ध्यान किस प्रकार लगाया जाता है।

ओ३म् का जाप हृदय से करना चाहिए। मानव शरीर में हृदय इस प्रकार है जिस प्रकार दुनिया में सूर्य। दोनों से नीली, पीली, हरी, लाल किरणें निकलती हैं। दोनों का आपस में सम्बन्ध है। दुनिया में सूर्य न रहे तो दुनिया मर जाती है। मनुष्य का हृदय धड़कना बन्द हो जाए तो इन्सान समाप्त हो जाता है। दोनों से निकलने वाली सूक्ष्म किरणें एक–दूसरे से मिलती हैं। किरणों की एक सड़क तैयार हो जाती है। सूर्य का ध्यान करके

thearyasamaj.org

ओ३म् का जाप करनेवाला जब शरीर के सूर्य इस हृदय में ओ३म् कहता है, तो इस सड़क से होकर वह आगे बढ़ता है क्षणभर में, क्षण के करोड़वें हिस्से में सूर्य के अन्दर पहुँच जाता है। मरते समय जब वह इस प्रकार से ओ३म् कहता है तो सूर्य की रोशनी इसे गोद में ले लेती है। सूर्य लोक इसका हो जाता है।

हमारी तो सारी संस्कृति ही सूर्य से ओतप्रोत है। प्राचीनकाल में हम अपना ध्वज बनाते थे तो लाल रंग का इसमें सूर्य बनाते थे। सूर्य में ओ३म् लिख देते थे। गुरु के पास जब शिष्य पहुँचता तो सबसे पहले गुरु शिष्य से कहता–

माणवक! सूर्यस्यावृतमनुवर्तस्व।

सा.ब्रा. 1/6/16 ।।

अर्थात् 'तेरी शिक्षा और जीवन का आदर्श सूर्य है,

और शिष्य यजुर्वेद के दूसरे अध्याय के 26वें मन्त्र का यह प्रतीक पढ़ता–

सूर्यस्यावृतमन्वावर्ते।

'मैं सूर्य का अनुकरण करूँगा।' स्वस्तिवाचन में यह मन्त्र पढ़ा जाता है–

स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्याचन्द्रमसाविव।

'सूर्य और चाँद की भाँति मैं कल्याण के मार्ग पर चलूँगा।' परन्तु सूर्य में ऐसा कौन–सा गुण है जिसके कारण इतना महत्त्व इसको दिया गया है? सूर्य का एक अर्थ प्राण भी है, और प्राण का एक अर्थ सूर्य भी। सूर्य इस दुनिया को प्राण देता है, इसमें रहनेवाले प्रत्येक व्यक्ति को ज्योति देता है। यह इसका पहला गुण है। परन्तु वह रोशनी देता है तो किसी से उधार लेकर नहीं, अपितु इसलिए कि उसके अपने अन्दर प्रकाश है। वह स्वयं ही रोशन है, इसलिए आर्यों ने इसे अपना निशान बनाया। वे स्वयं प्रकाशमान थे। दूसरों को प्रकाश देना चाहते थे। जो स्वयं नहीं जलते, वे दूसरों के दुःख को जला नहीं सकते। जो स्वयं प्रकाशित नहीं हैं, वे दूसरों को प्रकाशित नहीं कर सकते। सूर्य का दूसरा गुण यह है कि वह गर्मी देता है। पानी में, लोहे में, मिट्टी में, पत्थर में, आपके कपड़ों में, आपके शरीर में, हर जगह आग है। शरीर की अग्नि ठंडी हो जाए तो लोग कहते हैं, ''ले चलो, इसे मरघट में पहुँचा दो, यह ठण्डा हो गया है।'' पेट की आग बुझ जाए तो वैद्य कहता है, ''अब इसका स्वास्थ्य ठीक नहीं होगा।'' हर स्थान पर अग्नि आवश्यक है। अग्नि जीवन है। हवन कुण्ड में हम आहुति देते हैं तो उस समय, जब अग्नि प्रज्वलित हो जाए। पुकारकर हम कहते हैं–

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्वमिष्टापूर्ते संसृजेथामयं च।
अस्मिन्त्सधस्थेऽध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत।।

'उठो जागो हे अग्निदेव! जागो, हमारी इच्छाओं को पूरा करने के लिए, वह दशा उत्पन्न करने के लिए जिसमें विश्वभर के देवता हमारी भेंट को स्वीकार कर लें, हमारी भेंट को पाकर प्रसन्न हो जाएँ।'

यह अग्नि बहुत आवश्यक है। इसके बिना कोई कार्य नहीं होता। पेट के अन्दर डाला हुआ भोजन भी उस समय पचता है जब आग जल रही हो। पेट की अग्नि के सम्बन्ध में एक बात मैं आपको बताता हूँ। बार–बार मैं कहता हूँ कि भोजन तब खाओ जब पेट की अग्नि जल रही हो। कई भाई पूछते हैं कि पेट की आग को देखें किस प्रकार? कोई खिड़की तो लगी नहीं कि इसको खोलकर देख लें और जान लें अन्दर जलती है कि नहीं। परन्तु देखो, इस अग्नि को देखना कठिन नहीं, बहुत सरल है। नाक में दो छिद्र हैं न ? दायें छिद्र से श्वास चलता हो तो समझ लो आग जलती है, बायें से चलता हो तो समझो कि अग्नि नहीं जल रही है। खाना उस समय खाओ जब दायें छिद्र से श्वास चलता हो, नहीं तो नहीं खाओ; वह भोजन पचेगा नहीं, विष बन जायेगा। आप कहेंगे– ''वाह आनन्द स्वामी! यह अच्छा उपाय बता दिया तूने। दफ्तर या दुकान का समय हो गया, खाने की थाली सामने आ गई। अब दायाँ श्वास नहीं चलता तो क्या भूखे ही उठकर चले जायें और दफ्तर या दुकान में दिन–भर भूखे ही बैठे रहें?'' देखो, ऐसा करने के लिए मैं नहीं कहता। आपको भूखा मारना मुझे स्वीकार नहीं। मैं वह विधि बताता हूँ जिससे पेट की अग्नि जलाई जा सकती है। हमारे ऋषियों ने हर बात में कमाल किया है। इस विषय में भी किया है। मैंने इस विधि को सीखा बहुत कष्ट से। ऋषिकेश से आगे बढ़कर गरुड़ चट्टी के निकट एक पहाड़ पर मेरे गुरु रहते थे जिनसे मैंने हठयोग की क्रियाएँ सीखीं। उन्होंने मुझे 21 दिन भूखा मारा, तब यह विधि बताई। आज्ञा दी कि एक सप्ताह केवल तीन गिलास पानी प्रतिदिन पियो। जिस किसी प्रकार निर्वाह कर लिया मैंने। पानी के केवल तीन गिलास ही पीता रहा और कुछ खाया–पिया नहीं। एक सप्ताह व्यतीत हुआ तो उन्होंने कहा अब केवल दो गिलास ही पियो। मैं घबराया। पंजाब का गिलास नहीं था, वह यू.पी. का गिलास था, छोटा–सा। अट्ठारहवें दिन मुझसे हिला नहीं जाता था। हुलिया बदल गया था। शीशे में देखा, खुशहालचन्द खुशहालचन्द प्रतीत नहीं होता था। कोई निहालचन्द कमालचन्द–सा प्रतीत होता था। मद्रास का शरीर था मेरे गुरुजी का। गरुड़ चट्टी के ऊपर उनकी कुटिया के निकट ही मेरी कुटिया थी। अपनी कुटिया में नाड़ी पर हाथ रखे मैं बैठा था; तभी गुरु महाराज कुटिया में आए। मुझे नाड़ी पर हाथ रखे देखकर बोले, ''क्या करता है?'' मैंने कहा, ''देखता हूँ नब्ज़ चलती है या नहीं।'' वे बोले, ''इसकी चिन्ता नहीं करो। मेरे रहते तू मरेगा नहीं, मैं तुझे मरने नहीं दूँगा। इस प्रकार 21 दिन के कठिन तप के पश्चात् जो भेद मैंने सीखा, वह मैं आपको बिना किसी तप के, बिना शुल्क बताये देता हूँ। देखिये यह हाथ है न! इसी मुट्ठी बाँधकर दूसरी बग़ल में दबाइये। जिस बग़ल में दबाया है, उस ओर जितना झुक सकते हैं, झुक जाइये। थोड़ी देर ऐसा किये रहने से जिस हाथ की मुठ्ठी को बग़ल में दबाया है, उस ओर की नासिका चलने लगेगी। दाईं ओर के श्वास को सूर्य–स्वर कहते हैं, बाईं ओर के श्वास को चन्द्र–स्वर। जब सूर्य–स्वर चलने लगे तब भोजन कीजिये। वह पचेगा, रोग नहीं करेगा।

परन्तु यह बात तो बीच में वैसे आ गई, मैं कह रहा था यह कि सूर्य का दूसरा गुण अग्नि है। ओ३म् के उपासक को अपने अन्दर अग्नि पैदा करनी चाहिए। इस अग्नि के बिना कोई कार्य चलता नहीं। पेट में एक आग है, जिसे जठराग्नि कहते हैं। नाभि के अन्दर एक आग है जिसे वैश्वानर अग्नि कहते हैं। यह अग्नि शरीर का पॉवरहाउस है। हमारे शरीर में जितनी बिजली है, वह सब यहाँ से आती है। हमारे शरीर में जितनी बिजली है, वह सब यहाँ से आती है। यह बिजली न रहे तो श्वास बन्द हो जाता है। इस अग्नि से ठीक प्रकार से कार्य लेकर सूर्य को एक आदर्श बनाने वाले उपासक का यह कर्त्तव्य होना चाहिए कि वह दूसरों को भी आग दे। दूसरों को भी आगे ले जाए। जो लोग निराश होकर बैठ गए हैं, उन्हें कहे कि घबराओ नहीं, आओ मैं तुम्हें आगे ले चलूँगा।

सूर्य का तीसरा अंश है–पवित्रता। इसकी किरणें कीचड़ के अन्दर भी पहुँचती हैं, कूड़े और करकट के ढेरों के अन्दर भी, सभी जगह पहुँचती हैं, सबको शुद्ध करती हैं परन्तु स्वयं कभी अपवित्र नहीं होतीं। ओ३म् के उपासक को भी अपने अन्दर यह गुण लाने का प्रयत्न करना चाहिए। आप कहेंगे कि यह तो बहुत कठिन है। मैं मानता हूँ कि कठिन है, परन्तु कठिन बात को करने में ही तो वीरता है। साधारणतया जब हम बुराई और गन्दगी के निकट जाते हैं, तो इससे हम पर बुरा प्रभाव ही पड़ता है। जब हम गन्दे गीत सुनते हैं, गन्दे नाच देखते हैं, गन्दे दृश्य देखते हैं, तो इसका प्रभाव मन पर अवश्य होता है। हमें प्रयत्न करना चाहिए कि बुराई का प्रभाव हमपर न हो। हम बुराई को दूर कर दें। मैं यह नहीं कहता कि बुराई से भरे इस संसार को छोड़कर जंगलों में चले जाओ। जो लोग जंगलों में रहते हैं, दुनियादारी को छोड़ गये हैं उनको भी मैंने देखा है। उनके अन्दर भी कभी–कभी बुराई जाग उठती है। यदि वे यत्न न करें तो बहुत भयंकर रूप धारण कर लेती है। संन्यास लेने के पश्चात् जब मैं उत्तर काशी में पहुँचा तो नीली ठंडी गंगा को देखकर मन शान्त हो गया। मैं जा रहा था गंगोत्री को, कुछ दिन के लिए उत्तर काशी गंगा पर कुछ महात्मा रहते थे, उनके पास भी गया। उनके दर्शन भी किये। एक कुटिया में बैठा था तो पूछा, ''पासवाली कुटिया में कौन रहता है?'' एक सज्जन ने बताया, 'क्रोधी बाबा।'' मैंने आश्चर्य से कहा, ''उत्तर काशी के महात्माओं में भी क्या क्रोध हो सकता है?'' वे बोले, ''क्रोध देखना चाहते हो तो उनसे जाकर आग माँगना।'' मैं गया। देखा–कुटिया के बाहर एक महात्मा बैठे हैं, धूनी रमा रक्खी है उन्होंने। उनसे बातें करता रहा, कोई क्रोध प्रतीत नहीं हुआ।

चलते समय मैंने कहा, ''बाबा, थोड़ी–सी आग तो दे दीजिये।'' वे बोले, ''नहीं–नहीं, आग नहीं है, चला जा यहाँ से।'' मैंने उठते हुए कहा, ''बाबा! आग तो दिखाई देती है।'' वे चिल्लाकर बोले, ''जाता है कि नहीं? चला जा यहाँ से।'' मैंने कहा, ''आग तो बहुत है, बहुत तेजी से जल रही है, आप कैसे कहते है कि आग नहीं है?'' वह मोटी–मोटी गालियाँ देने लगे। मैंने काफ़ी परे आकर कहा, ''बाबा! अब तो आग में ज्वालाएँ भी उठने लगीं, तुम क्यों कहते हो कि आग नहीं है?'' परन्तु इससे पूर्व कि वह अपना चिमटा उठाकर मेरी ओर भागते , मैं उनकी गालियाँ सुनता हुआ चला आया। सो ऐसी बात नहीं कि जो लोग जंगलों में चले गये हैं उन्होंने सब बुराइयों को छोड़ दिया है, वे बिल्कुल पवित्र हो गये हैं। पवित्र लोग यहाँ भी बसते हैं–इस शहर में , इस करोलबाग में; इन सड़कों के ऊपर, मकानों के अन्दर रहने वाले भी पवित्र हो सकते हैं। और सच्ची बात यह है कि शहरों मे रहते हुए पवित्र रहना ही वीरता है। यह शहर परीक्षा–स्थान है। बार–बार परीक्षा होती है। यहाँ पर कमल के समान रहना पड़ता है; दुनिया के अन्दर, परन्तु दूनिया से थोड़ा ऊपर उठकर।

यही कहना पड़ता है–

दुनिया में हूँ दुनिया का तलबगार नहीं हूँ।
बाज़ार से गुज़रा हूँ ख़रीदार नहीं हूँ।।

अर्थात् अग्नि और सूर्य की भाँति अपवित्रता को नष्ट करते हुए स्वयं पवित्र रहना पड़ता है।

शेष अगले अंक में....

thearyasamaj.org

योग ही समस्त मानव में एकत्व भावना ला सकता है

● श्री हरिश्चन्द्र वर्मा 'वैदिक'

विश्व में मानव चेतना ही प्रधान है। इस चेतना को जागृत एवं सब में एकत्व भाव लाने के लिये एक मात्र योग है। इसी योगाभ्यास से परिवार से लेकर समाज एवं सारे देश परस्पर अपने को एक कुटुम्ब समझने लगता है। योग से इतनी दैवी शक्ति प्राप्त होती है कि वह सबमें सर्वोदयी भावना उत्पन्न कर देती है, उसी से '**वसुधैव कुटुम्बकम्**' की भावना जागृत होती है। वेद ने जिसे '**आत्मवत्सर्वभूतेषु**' की भावना प्रतिपादित की है। जीयो और जीने दो ये सर्वराज्य की उदात्त भावनायें हैं। ऐसे राज्य में अमित्रता की भावना नष्ट हो जाती है। अतः यदि सबका साथ मिले तो उससे सबका विकास संभव होने लगता है।

जब मानव योग का अभ्यास करने लगता तो उन्हें आध्यात्मिक शान्ति प्राप्त होने लगती है। परस्पर का द्वेषभाव समाप्त होने लगता है। अमित्रता और बदले की भावना नहीं रहती। ऐसे योग से युक्त जन की बुद्धि और वाणी में ओज और तेज विद्यमान रहता है। वह ईश्वर से यही प्रार्थना करता है कि '**मित्रस्यांह चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।।** (यजु. अ. 36/मं. 18) मैं मित्र की प्रेमपूर्ण दृष्टि से सब प्राणियों को देखूँ और मैं भी सब प्राणियों के द्वारा मित्रतापूर्ण दृष्टि से देखा जाऊँ। अर्थात् न मेरा कोई शत्रु हो और न मैं किसी का शत्रु बनूँ। इस प्रकार की भावना परस्पर होनी चाहिए। तभी समाज में भ्रातृ भाव, मैत्री, प्रीति, सौजन्य, सहानुभूति, सहृदयता, समान बुद्धि एवं सर्वाभ्युदयकारी भावनायें वृद्धि को प्राप्त कर सकती हैं।

सच्चे योग के अभ्यास से मानव '**मनुर्भव**' बन जाता है। वह अनैतिक कार्य नहीं कर सकता और न वह किसी को बलात्कार, भ्रूणहत्या, न भ्रष्टाचार करने देता है। योग करने वालों की आत्मा अधर्म की ओर जाने से रोकने लगता है।

ऋषि वैज्ञानिक पतंजलि ने 'योग' में प्रवेश के लिए सर्वप्रथम 'यम–नियमों' को पालन करने का आदेश दिया है। जैसे आसनों को करने से शारीरिक लाभ होता है, वैसे ही यौगिक क्रियाओं से आध्यात्मिक लाभ होता है। योगाभ्यास करने के पहले यदि यम–नियमों का पालन न किया जाय तो योग का वास्तविक फल योग करने वालों को प्राप्त नहीं होता, इसलिये पहले '**यम नियमों**' को अपनाना आवश्यक है– **तत्राहिंसा सत्यास्तेय ब्रह्मचर्या परिग्रहाः यमाः**। (योग स.)

सत्य–मन, वचन और क्रिया तीनों में सत्य को प्रतिष्ठिता होने से योग दर्शन भ्रष्यचार व्यास के लेखानुसार, योगी की वाणी अमोघ हो जाती है। **अस्तेय**–मन, वाणी और क्रिया से किसी की भी चोरी न करना। **अहिंसा**–मन, वाणी और क्रिया से किसी भी प्राणी को तकलीफ न देना। **अपरिग्रह**– न्यायपूर्वक धनादि का संग्रह एवं भोग करें। **ब्रह्मचर्य**–शरीर में उत्पन्न हुए रज वीर्य रक्षा करते हुए लोकोपकार की विद्याओं का अध्ययन करना। **नियम**–अपने कर्म के फल से दुःखी न होना पड़े इसलिए योगी को नियमों का पालन करना चाहिये। **शौच**– बाह्य और अन्तःकरणों को शुद्ध रखना। **सन्तोष**– पुरुषार्थ से जो कुछ प्राप्त हो उससे अधिक की इच्छा न करना। **तप**– शीतोष्ण, सुख–दुःखादि को एक जैसा समझते हुए नियमित और संयमित जीवन व्यतीत करना। **स्वाध्याय**– ओंकार का श्रद्धापूर्वक जप करना और वेदादि सत्य शास्त्रों का अध्ययन करना। **ईश्वर प्रणिधान**–ईश्वर का प्रेम हृदय में रखते हुए और ईश्वर को अत्यन्त प्रिय परमगुरु समझते हुए अपने समस्त कर्मों को उसके अर्पण करना। **योग**– ''**युज्**'' धातु से योग शब्द सिद्ध है जिस धातु के अर्थ मिलना–जुलना आदि के है **युज्यतेऽसौ योगः**। जो युक्त करे मिलावे उसे योग कहते हैं।

योगियों के मुकुटमणि योग, शिरोमणि पतंजलि ने योग की परिभाषा इस प्रकार की है– योग श्चित्तवृत्तिनिरोधः। (योगदर्शन,1–2) अर्थात् चित्त की वृत्तियों के निरोध का नाम ही योग है। चित्त की वृत्तियां क्या हैं? जब वह बाहर काम करता है तब उसका नाम बहिर्मुखी वृत्ति होता है और जब अन्तर काम करता है तब उसका नाम अन्तर्मुखी वृत्ति होता है। जीव चूँकि प्रयत्नशील है इसलिये दोनों वृत्तियों में से एक न एक सदैव जारी रहती है। बहिर्मुखी वृत्ति जब जारी रहती है। तब जीव अन्तःकरणों के माध्यम से जगत् में इन्द्रियों द्वारा काम किया करता है, परन्तु जब अन्तर्मुखी वृत्ति ध्यान द्वारा ठहर जाता है तब आत्मानुभव और परमात्म दर्शन होने लगता है।

योगियों के मुकुटमणि योग, शिरोमणि पतंजलि ने योग की परिभाषा इस प्रकार की है– **योग श्चित्तवृत्तिनिरोधः**। (योगदर्शन,1–2) अर्थात् चित्त की वृत्तियों के निरोध का नाम ही योग है। चित्त की वृत्तियां क्या हैं? जब वह बाहर काम करता है तब उसका नाम बहिर्मुखी वृत्ति होता है और जब अन्तर काम करता है तब उसका नाम अन्तर्मुखी वृत्ति होता है। जीव चूँकि प्रयत्नशील है इसलिये दोनों वृत्तियों में से एक न एक सदैव जारी रहती है। बहिर्मुखी वृत्ति जब जारी रहती है। तब जीव अन्तःकरणों के माध्यम से जगत् में इन्द्रियों द्वारा काम किया करता है, परन्तु जब अन्तर्मुखी वृत्ति ध्यान द्वारा ठहर जाता है तब आत्मानुभव और परमात्म दर्शन होने लगता है।

एकांत एक आसन में बैठकर अन्तरर्मन से श्रद्धापूर्वक जब ओम् प्रणव को प्राण के समान बोध करते हुए उसके तरफ ध्यान किया जाता है तब मन की वृत्तियां भी उसी की ओर होकर एक मन के साथ हो जाती हैं। उस अवस्था में जैसे प्रेमी अपनी प्रमिका के ध्यान में डूबा रहता है, जैसे विद्यार्थी विद्याध्ययन में लगा रहता है, जैसे लेखक कोई नये लेख के लिखने में रमा रहता है, उस समय (उन तीनों के सामने कौन आया है और कौन गया, कब चाय दिया गया, कौन क्या कह रहा था) कुछ भी भान नहीं होता। वैसे ही योग करने वाले का जब स्वस्वरूप के साथ '**हृदय या भृकुटी**' में अपने इष्ट देव को जानने की इच्छा से ध्यान एक हो जाता है, तब मन के साथ प्राण भी एक होने लगता है। (क्योंकि प्राण से मन का सम्बन्ध है)। फिर कुछ दिन के अभ्यास से अपने आत्मा का स्वरूप, प्रकाश के रूप में (उस अवस्था में) दिखने लगता है। इस योग क्रिया से अनेक लाभ होते हैं। प्रथम तो योग करने वाले का मन शिव संकल्प वाला हो जाता है। उसकी वाणी, आकर्षणीय हो जाती है और परमात्मा की कृपा से '**असतो मा सद्गमय' तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्माअमृ गमय**' की ओर जाने लगता है।

योगाभ्यास करने से पहले– सर्वप्रथम दीर्घस्वासन 10 बार लम्बा स्वांस लें और छोड़ें। उसके पश्चात्– कपालभाति (लोहार की धौंकनी की तरह) 25 या 50 बार करें। उसके एक मिनट बाद 'अनुलोम–विलोम'(नाड़ी शोधन प्राणायाम) 15 से 20 बार करें। (यह सभी प्राणायान यथा शक्ति करें) उसके पश्चात् '**रेचक**', पूरक और कुम्भक प्राणायाम में प्रथम रेचक प्राणायाम को सिद्ध करें, मूलेन्द्रिय को खींच रखें, वायु को बल से बाहर फेंककर बाहर ही रोकें, जब स्वांस लेना चाहें तो वेग से वायु को बाहर निकाल दें, पुनरपि वैसे ही करें। (साथ ही प्राणायाम मंत्रों का जप करते रहें) ध्यान को हृदय अथवा भृकुटी में स्थिर करें। इस प्रकार रेचक का कुम्भक प्राणायाम तीन बार करें। इन क्रियाओं से ऊर्जा की प्राप्ति, बुद्धि का विकास और मन तथा शरीर पवित्र होता जाता है। (परन्तु जिस दिन उदर ठीक न रहें, गैस रहे उस दिन रेचक प्राणायाम न करें। योग एवं सारे प्राणायाम के अंत में 5 बार भ्रामरी अवश्य करें।

हमारे आचार्य जी '**सन्ध्या योग रहस्य**' में लिखे हैं कि सन्ध्या के माध्यम से परमात्मा में चित्त–वृत्ति को लगाने के लिये सर्वप्रथम 3 प्राणायम करने चाहिये। जो प्राणायाम बिना मंत्र–जप के साथ होता है, (जैसा कि बाबा रामदेव दिखाते हैं) उससे शारीरिक लाभ तो होता है, परन्तु मन को ध्यान के लिये कोई आधार प्राप्त नहीं होता। अतः इस प्राणायाम के समान मन को ओम् मंत्र के जप में नियुक्त करना चाहिये। अतः इन तीनों प्राणायाम में मन से ओम् भूः ओम् भुवः ओम् स्वः, ओम् महः, ओम् जनः, ओम् तपः, ओम् सत्यम्' का जप करते रहना चाहिये, यही मन को ध्यान में प्रवृत्त करने के लिये पहला पाठ है।'

'ओम् प्रणव सर्वरक्षक है। परमात्मा प्राणों का भी प्राण है। उससे हमारा प्राण सम्बन्धित हैं, अतः मैं परमात्मा के प्राण से प्राणवान् हो रहा हूँ। मेरे दुःख उसकी भुवः शक्ति से दूर होते हैं, मुझ में आनन्द का प्रवाह उसी आनन्द–स्वरूप से आ रहा है। ऐसे प्रभु का हम वरण करके उसके भर्ग को धारण करने से हमें उसका शुद्ध ज्ञान प्राप्त होता है। वह हमारा गुरु है क्योंकि वह समस्त ज्ञान विज्ञान का भण्डार है। वह आचार्य है, हमें वह शुभ गुण, कर्म स्वभाव युक्त आचार प्रदान कर अपनी कृपा बरसायेगा। इसी प्रकार की भावना करें।'

नित्य प्रातः प्राणायाम की वृद्धि करते रहने से प्राण दीर्घ और सूक्ष्म होता रहता है। साथ ही मन का मैल साफ होने लगता है। इसका फल यह होता है कि –'ध्यानंनिर्विषयमनः ,ध्यान में मन विषयों से हटकर अपने किसी श्रद्धा के लक्ष्य पर एकाग्र होने लगता है। मन का प्राण से सम्बन्ध होने से 'मन गायत्री मंत्र' के जप से भी एकाग्र होने लगता है, और इस एकाग्रता के प्रभाव से प्राण का भी स्तम्भन होने लगता है। और तब उनके योग से आध्यात्मिक विज्ञान प्रकाश का आनन्द योगी को प्राप्त होने लगता है। यह सब आध्यात्मिक विज्ञान का बहुत कठिन मार्ग है।

मु. पो. मुरारई, जिला वीरभूम (पं. बंगाल)
731219

उत्कृष्ट शङ्का समाधान

● स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

शंका–अच्छे या बुरे कर्मों का फल अगले जन्म में ही मिलता है, इसी जन्म में क्यों नहीं मिलता?

समाधान– अच्छे कर्मों और बुरे कर्मों का फल इस जन्म में भी मिलता है। आपको याद है दिल्ली के दो गड़बड़ व्यक्ति थे, जिनका नाम था रंगा और बिल्ला। रंगा–बिल्ला को इसी जन्म में सजा मिली या नहीं मिली? इंदिरा गाँधी जी का हत्यारा बेअंत सिंह, उसको इसी जन्म में दण्ड मिला कि नहीं मिला?और आप छब्बीस जनवरी को देखिए, कितने वीर सैनिकों को पुरस्कार मिलते हैं, परमवीर चक्र, अशोक चक्र आदि–आदि चक्र मिलते हैं। तो यह देखो, इसी जन्म में कर्म किया, इसी जन्म में फल मिला। आप लोग इसी जन्म में मेहनत करते हैं, और इसी जन्म में खूब वेतन कमाते हैं। व्यापारी लोग व्यापार में पैसे कमाते हैं। इसी जन्म में कर्म करते हैं, इसी जन्म में फल मिलता है। खूब मिलता है।

कर्मों का फल इस जन्म में भी मिलता है। ऐसा नहीं है कि, सारा अगले जन्म में ही मिलता है। कुछ यहाँ मिलता है, कुछ आगे मिलता है।

शंका– संस्कार–विधि में बालक के जात–कर्म संस्कार के समय, तिथि और तिथि के देवता, नक्षत्र और नक्षत्र के देवता की आहुति का विधान किया गया है। उन्होंने लिखा है–गृहस्थ व्यक्ति यदि दैनिक यज्ञ नहीं कर सकता है, तो कम से कम पूर्णिमा व अमावस्या के दिन यज्ञ अवश्य करे। इन दो विशेष दिनों का क्या महत्व है? क्या चंद्रमा का घटना और बढ़ना हमारे जीवन पर प्रभाव डालता है?

समाधान–'सत्यार्थ प्रकाश' में बिल्कुल ठीक लिखा है कि ग्रह–नक्षत्रों का प्रभाव नहीं होता, इसलिए बालक की जन्मपत्री नहीं बनवानी चाहिए। उसका नाम शोक–पत्र है। आपकी जन्मपत्री में ऐसा कुछ नहीं लिखा कि कल आपका भविष्य कैसा होगा।

और रही बात कि 'संस्कार विधि' में तिथि और नक्षत्र के देवता आदि के लिए आहुति देना लिखा है। उसका अर्थ यह नहीं है कि उन तिथि के देवता, नक्षत्र और नक्षत्र के देवता को यदि हम आहुति देंगे, तो ये देवता प्रसन्न हो जाएंगे और हमारा भविष्य अच्छा बना देंगे। **इतिहास की रक्षा के लिए, यह विधान किया गया है, कि उस दिन क्या तिथि थी, उस दिन नक्षत्र कौन सा था। पृथ्वी और ग्रहों की स्थिति क्या थी?** इतिहास के स्मरण के लिए यह काम करना चाहिए।

पहले लोग तिथि और नक्षत्र आदि के हिसाब से इतिहास लिखते थे। आज तो अंग्रेजी तारीख में लिखते हैं, जैसे–26 जनवरी 1902, 25 फरवरी 1925, इससे तारीख पता चलती है, कि इस व्यक्ति का जन्म कब हुआ था, कितने साल पहले हुआ था, आज क्या उम्र है। वह केवल इतिहास की रक्षा के लिए है। उससे हमारा भविष्य सुधरता हो, ऐसी कोई बात नहीं।

अब रही बात कि गृहस्थ व्यक्ति को प्रतिदिन यज्ञ करना चाहिए। तो वो बिल्कुल ठीक लिखा है। फिर लिखा है, आपत्तिकाल में यदि वो न कर सके। मान लो गरीब आदमी है, हर रोज हवन करने के लिए साधन नहीं है, तो कोई बात नहीं। ऐसा व्यक्ति पूर्णिमा और अमावस्या यानी पन्द्रह दिन में एक बार तो कम से कम अवश्य करे। उसके लिए यह विकल्प दिया है। कुछ न करने से, कुछ करना अच्छा है। किस दिन करें, तो एक दिन बता दिया। आजकल तो लोग संडे की छुट्टी मनाते हैं। पुराने समय में यह संडे की छुट्टी नहीं होती थी। पूर्णिमा की, अमावस्या की, और अष्टमी की, ऐसे महीने की चार छुट्टियाँ होती थीं। एक पूर्णिमा, एक अमावस्या और शुक्ल पक्ष में एक अष्टमी, कृष्ण पक्ष में एक अष्टमी आएगी। तो स्वामी दयानन्द जी ने यूँ कह दिया, कि पूर्णिमा और अमावस्या में हवन कर लो, क्योंकि उस दिन छुट्टी होती है।

समुद्र में ज्वार–भाटा तो रोज चढ़ता–घटता है। वो तो रोज चलता है। लेकिन अमावस्या और पूर्णिमा को चन्द्रमा का कुछ विशेष आकर्षण होता है। **इसलिए उस दिन ज्वार–भाटा कुछ तेज आता है। तो उसी हिसाब से हमारे जीवन पर ज्वार–भाटे का असर होता है, वो तो ठीक है। वो तो प्राकृतिक घटना है।** उसमें कोई आपत्ति नहीं।

ज्वार–भाटे का ऐसा कोई सूक्ष्म प्रभाव नहीं है कि, वह पूर्णिमा को किसी व्यक्ति का व्यापार बहुत अच्छा बना दे, दूसरे का व्यापार बिगाड़ दे। जैसा ये हस्तरेखा, भविष्य–फल वाले लोग बताते हैं। वो सब गड़बड़ है।

दर्शनयोग महाविद्यालय
रोजड़वन, गुजरात

Thus Spoke Swami Dayanand

- ✦ A broken pledge injures a man's character more than anything else. Therefore, once you make a promise, keep it.
- ✦ It is hypocrisy to believe one thing and say another, and thus mislead people in order to gain selfish ends.
- ✦ A child should not lose his temper, or say a rude word; he should rather cultivate a speech that is pacific and sweet.
- ✦ Father, mother and tutor, a child should serve with all his capabilities and resources, all his heart, and all his soul.
- ✦ Eat a little short of appetite, and abstain from animal diet and spirituous liquors.
- ✦ The wearing of jewellery (gold, silver, pearls, rubies, diamonds, etc.) adds no beauty to the soul. It only arouses vanity and other lower passions, gives rise to fear of robbery, and may even be the cause of death.
- ✦ Blessed are the men and women whose minds are centred on the acquisition of knowledge; who possess sweet and amiable tempers; who cultivate truthfulness and other similar virtues; who are free from vanity and uncleanliness; who enlighten the minds of those who are in ignorance; whose chief delight consists in promoting the happiness of others by the preaching of truth, by generous distribution of knowledge without fee or reward; and who are engaged in altruistic work as prescribed by the Vedas.
- ✦ By the increase of bodily strength and activity, the intellect becomes so subtle that it can easily grasp the most abstruse and profound subjects.

Compiled by — Satyapriya,
09868426592

(Sourced from the English translation of 'Satyarth Prakash' by Dr. Chiranjiv Bhardwaj and published as 'The Light of Truth' from D.A.V. Publication Division)

thearyasamaj.org

सम्बन्ध

● राज कुकरेजा

सम्बन्ध शब्द का बहुत ही सुंदर अर्थ है – अच्छी प्रकार से बंध जाना। स्व की इकाई से परिवार बनता है, परिवार से समाज और समाज से राष्ट्र। राष्ट्र की भावना से पूर्णतः ओत–प्रोत होकर सम्पूर्ण विश्व में बन्धुत्व की भावना आ जाने पर सब अपने हैं तब परायेपन का प्रश्न ही नहीं उठता। जीवन का प्रारम्भ ही सम्बन्ध से है। परिवार अर्थात सम्बन्धी गण व्यक्ति के एक ओर सुखों को बढ़ाते हैं तो सम्बन्धी ही दुःखों को कम भी करते हैं। किसी ने बड़ा ही सुंदर कहा है कि व्यक्ति के जीवन में सम्बन्धी और औषधि एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। दोनों ही उस की पीड़ा को कम करने का काम करते हैं, लेकिन औषधि अपना प्रभाव कुछ समय की सीमा कर सकती है पर सम्बन्धों को निभाने की कोई सीमा तय नहीं की जाती। (Relations and medicine play the same role in our life i.e. both care for us in pain. BUT amazing thing is that relations do not have an expiry date.)

सम्बन्ध को दो प्रकार का कहा गया है। एक को पारिवारिक सम्बन्ध तो दूसरे को वैचारिक। बालक जन्म से ही पारिवारिक सम्बन्ध से स्वतः बंध जाता है और विवाहोपरांत धर्म सम्बन्ध बनते हैं, जिन्हें धर्मानुसार जीवन पर्यन्त निभाना पड़ता है। निभा पाए अथवा नहीं, इस में पूर्णतः स्वतंत्र होता है। अपने व्यवहार के द्वारा ही मधुर और कटु सम्बन्ध बना लेता है। पारिवारिक सम्बन्ध बड़ी ही सूझबूझ से निभाने होते हैं। परिवार के सभी सदस्यों के समान विचार हों यह आवश्यक नहीं है। यह विचारों की विभिन्नता और विपरीतता भी तब होती है, जब विवाहोपरांत नई वधू का नये घर में प्रवेश होता है। यह होना स्वाभाविक ही है क्योंकि दोनों परिवारों के परिवेश और संस्कार तथा विचार एक सम्मान नहीं हो सकते। बुद्धिमान लोग परिवार में परस्पर एक दूसरे के विचारों का समान करते हैं और कई बार विचारों की तो उपेक्षा कर देते हैं, सम्बन्धों में न तो दूरी बनाते हैं और ना ही दरार पड़ने देते हैं। इस प्रकार परिवार विघटन से बचे रहते हैं। परिवार एक माला है जिस में परिवार के सभी सदस्य रंग–बिरंगे मोती के समान पिरोये हुए हैं। इस माला की डोरी अत्यंत मजबूत होनी चाहिए। बड़ा ही सुंदर कहा गया है कि परिवार में परस्पर सदस्यों में तर्क–कुतर्क होता है, लड़ते–झगड़ते हैं और कई बार तो परस्पर बोल–चाल बंद करने की नौबत भी आ जाती है लेकिन अंत में परिवार, परिवार ही रहता है, अपने परिवार के स्नेह पर आंच नहीं आने देते हैं (No family is perfet. We argue, we fight, we even stop talking to each other at times, BUT in the end family is family. The love will always be there.) वैचारिक सम्बन्ध समान विचारों से बनते भी हैं और बिगड़ते भी हैं। जब तक विचारों में सामंजस्य रहता है तो सम्बन्ध मधुर और थोड़ा भी मतभेद हुआ तो वही मधुर सम्बन्धों में कड़वाहट आ जाती है और सम्बन्ध भी बिखरने लगते हैं।

माता–पिता का अपनी सन्तान के साथ सम्बन्ध सब से सुंदर व मधुर सम्बन्ध है। इस सम्बन्ध का नाम है वात्सल्य। ईश्वर के बाद माता–पिता का ही स्थान है। बालक का सर्वाधिक हितैषी व शुभ चिंतक माता–पिता से बढ़ कर कोई नहीं हो सकता। केवल माता–पिता ही हैं जो अपनी सन्तान की सब ओर से उन्नति चाहते हैं और सन्तान की उन्नति से हर्षित होते हैं क्योंकि उनमें ईर्ष्या जैसी भावना नहीं होती है। यह एक पवित्र सम्बन्ध है परन्तु बालक के युवा होने पर इस सम्बन्ध की गरिमा कम होने लगती है, कारण तो अनेक हो सकते हैं, परन्तु मुख्य तो दो ही हैं। प्रथम है कि माता–पिता का बालक को आवश्यकता से अधिक लाड़–दुलार देना और अच्छे संस्कारों से वंचित रखना। विद्यालयों में भी संस्कार हीन व भौतिक शिक्षा तक सीमित रखना और दूसरा कारण है माता–पिता की अपनी सन्तान से यही अपेक्षा बनाये रखना कि बालक बड़ा होकर हमारे बुढ़ापे की लाठी बनेगा। माता जब बालक का निर्माण मोहवश, स्वार्थवश करती है तो इस सम्बन्ध की मधुरता व पवित्रता में कटुता पनपने लगती है। सम्बन्ध बिगड़ने लगते हैं, दोनों के सम्बन्धों में उदासीनता आने लगती है कि परिस्थितियां कई बार भयंकर रूप धारण कर लेती हैं। आज वृद्ध आश्रम खुल रहे हैं और वृद्ध माता–पिता अपने जीवन की संध्या इन आश्रमों में बिताने को विवश हो रहे हैं।

सम्बन्ध बिगड़ते हैं परस्पर एक दूसरे से आवश्यकता से अधिक अपेक्षाएं रखना, दूसरों के कर्तव्यों पर अपना अधिकार समझना और दूसरी ओर त्याग की भावना का न होना। इसी सन्दर्भ में एक महिला ने अपने विवाह के प्रारम्भिक जीवन में उसे किस प्रकार की तनाव पूर्ण परिस्थितियों का सामना करना पड़ा अपनी आप बीती सुनाई जो हम सब को एक संदेश देती है। उसने बताया कि किस प्रकार उसने ससुराल पक्ष की ओर से अनेकों अपेक्षाएं पाल रखी थीं तो दूसरी ओर सास ने भी बहू को लेकर अनेकों सपने संजोये हुए थे। दोनों की अपेक्षाएं एक दूसरे पर खरी नहीं उतर पाने के कारण दोनों अपेक्षाएं एक दूसरे पर खरी नहीं उतर पाने के कारण और दोनों अपेक्षाएं एक दूसरे पर हावी होने लगी। स्थिति तनाव पूर्ण एवं अशांत हो गई कि लगने लगा कि अब तो जीना ही भारी हो रहा है। अब किसी भी तरह सास से छुटकारा पाना ही है और इस के लिए योजना मन ही मन बना डाली और एक डाक्टर मित्र को विश्वास में ले लिया कि वे सास से छुटकारा पाने में उस की सहायता करे। डाक्टर मित्र ने परामर्श दिया कि सदैव के लिए छुटकारा पाने का सरल सा उपाय यही है कि उन्हें खाने में विष दे दिया जाए, पर ये सब बड़ी ही सावधानी पूर्वक करना पड़ेगा और विष की मात्रा भी कम परन्तु कुछ दिन लगातार देनी होगी और इतनी सतर्कता से करना होगा कि शंका की सुई तुम पर न घूमने पाए। इसके लिए पहले तुम्हें सास के विश्वास को जीतना पड़ेगा और अपने व्यवहार को उनके अनुरूप कम से कम कुछ दिनों के लिए करना होगा। सोचा कि कुछ ही दिनों की बात है और सदा के लिए स्वच्छन्द मुक्त जीवन तो जीने को मिल जाएगा। अब व्यवहार में मधुरता का रस घुलने लगा, सास की हर छोटी–बड़ी इच्छा का पालन बड़ी ही तन्मयता से होने लगा। बहु के इस परिवर्तित रूप को देख कर सास भी विचारने लगी कि कितनी अच्छी मेरी बहू है। मैं ही इसे समझ नहीं पाई और व्यर्थ में ही नोंक–झोंक करती रहती थी। बहु अब सास में अपनी ही माँ की छवि देखने लगी कि मन में धक्का सा लगा कि वह यह क्या अनर्थ करने जा रही है, विचार आते ही तुरंत डाक्टर मित्र के पास भागी और उसे सारी परिस्थिति से अवगत कराया और अब ऐसी दवा चाहिए जो दिए हुए विष के प्रभाव को कम कर सके। उस की मानसिक व्यथा को देख डाक्टर मित्र जोर से हंसी और बोली कि उस ने तो उसे माँ के वात्सल्य का विष दिया था अब इसे जीवन पर्यन्त देती रहना। मित्र की सूझ–बूझ पर उसे आश्चर्य हुआ। रोते हुए बोली तुम्हारा किन शब्दों में धन्यवाद करूं जो तुमने एक घिनौने अपराध से ही नहीं बचाया अपितु मुझे जीवन भर होने वाली आत्म–ग्लानि से बचा लिया है और जीने की कला भी सिखा दी है, तुम्हारे ही कारण आज मैं सास की चहेती, लाड़ली बहू बन गई हूँ और सच्चे अर्थों में सम्राज्ञी बन कर परिवार के सदस्यों के दिलों पर राज कर रही हूँ।

परस्पर सम्बन्ध बिगड़ने में एक यह भी मुख्य कारणों में है कि प्रायः अन्यों के दोष देखने और उन्हें दूसरों को बताने में सुख लेने लग जाते हैं। दोष देखते–देखते व्यक्ति का स्वभाव इतना बिगड़ जाता है कि वह केवल दोष ही देखना प्रारम्भ कर देता है। इस से अध्यात्मिक उन्नति रुक जाती है। क्या सही है व क्या सही नहीं है इस का विवेक ही नहीं रहता। इस नियम से सभी को अवगत होना चाहिए कि कोई भी दो व्यक्ति ऐसे नहीं होते कि जिनकी बुद्धि शत–प्रतिशत एक जैसी अर्थात् अनुकूल हो, इस लिए विरोध होगा ही। यह सोच ही व्यर्थ है कि सभी मेरे अनुकूल ही आचरण करें. संसार का नियम है कि यहाँ अच्छे–बुरे लोग होते ही हैं, इस लिए इस नियम को दृष्टि में रखते हुए चाहे कोई कितना विरोध करे, दुर्व्यवहार करे परन्तु उसके प्रति ईर्ष्या, द्वेष नहीं करना चाहिए। ईर्ष्या, घृणा, क्रोध इन अवगुणों का हल बहुत ही आसान है। हम सभी गुणों में से सर्वश्रेष्ठ गुण को अपने स्वभाव में मिला सकते हैं जिस का नाम है क्षमा।

कोई भी सम्बन्ध पूर्णतः एक प्रकार से नहीं निभाये जा सकते और न ही इसकी अपेक्षा रखनी चाहिए। दो पौधे एक ही बगीचे में एक ही खाद–पानी के बाद भी एक प्रकार का फल नहीं दे सकते। प्रत्येक सम्बन्ध को अपनी ओर से यथोचित स्नेह, प्रेम, समय व ध्यान दें परन्तु उस सम्बन्ध के फल की, परिणाम की सीमित, संकीर्ण अपेक्षा रख कर अपने को कुंठित न करें। हमारा भिन्न–भिन्न क्षेत्रों के लोगों से सम्बन्ध देश, काल व परिस्थितियों पर निर्भर करता है हम सामाजिक प्राणी हैं, अपने अधिकारों की प्राप्ति व कर्तव्यों के पालन के लिए यह आवश्यक है कि हमारे सम्बन्धों में स्वार्थ, संकीर्णता, संकुचिता के स्थान पर द्रष्टि में प्यार और हृदय में विशालता को स्थान दें जो सम्बन्धों को सुदृढ़ बनाती है। यदि हम विभिन्न रिश्तों में अपेक्षाकृत दूरी, संयम नहीं रखेंगे तो हमारा श्रम व्यर्थ हो जाएगा। परिवार के सम्बन्धों में, कार्यशलयों के सम्बन्धों में, मित्रों के सम्बन्धों में आध्यात्मिक परिपेक्ष्य के सम्बन्धों में बड़ी सावधानी से निर्वाह करना होता है।

आज के परिवेश में परिवारों का स्वरूप विशेषतया बड़े–बड़े शहरों में दिन प्रतिदिन बदलता जा रहा है। अब हमारे घर बड़े हो गये हैं, पर परिवार छोटे हो गए हैं। इंटरनेट और टेलीफोन से तो सारे विश्व से जुड़ गये हैं, जिन्हें देखा नहीं व जानते नहीं, पर अपने शहर में उन लोगों से चन्द्रमा तक जा कर वापिस आ गये हैं, पर हम अपनी गली में ही जा कर पड़ोसी से नहीं मिलते। अपने घरों की दीवारें ऊँची बनवाते जा रहे हैं, स्वयं को किलों में बंद कर रहे हैं, हर समय अनिष्ट की आशंका घेरे रहती है। जिस के भयंकर परिणाम सामने आ रहे हैं। असामाजिक तत्व निशंक हो कर सड़कों पर घूम रहे हैं। लोग भी भावना और सम्वेदना शून्य होते जा रहे हैं। आज मनुष्य अपने आस–पास तनाव का ऐसा ताना–बाना बुनता जा रहा है कि अपनी स्वभाविक हंसी को भूल रहा है, जिस कारण पार्कों में बैठ कर कृत्रिम हंसी का आश्रय लेना पड़ता है।

सांसारिक जगत में हमारा माता–पिता से सम्बन्ध हमारे कर्म अनुसार और ईश्वर की न्यायव्यवस्था के अनुसार होता है। हमारे हर नये जन्म के साथ हमारे नये माता–पिता एवं सम्बन्ध बनते हैं। इन सम्बन्धों को शारीरिक सम्बन्ध कहा जाता है और यह हर जन्म के साथ बनते और बिगड़ते हैं। ऐसे सम्बन्ध अनित्य होते हैं। अध्यात्मिक जगत में हम ईश्वर के साथ अपना मनचाहा सम्बन्ध

शेष पृष्ठ 07 पर

thearyasamaj.org

मनुष्य को इन चार के ऊपर पूर्ण विश्वास रखना चाहिए

●खुशहालचन्द्र आर्य

जो मनुष्य अपने जीवन को सुखी व सन्तोषमय बनाना चाहता है, उसको इन चार के ऊपर पूर्ण विश्वास रखना पड़ेगा। तभी वह सुखी व सन्तोषी बन कर रह सकता है। यदि कोई इनके ऊपर पूर्ण विश्वास न रख कर चलेगा तो वह कभी भी सुखी व सन्तोषी नहीं बन सकता। वे चार हैं (1) **ईश्वर की न्याय–व्यवस्था** (2) **वेद–ज्ञान** (3) **महर्षि दयानन्द के मन्तव्य** (4) **आपकी आत्मा की आवाज।**

1. ईश्वर की न्याय–व्यवस्था:– ईश्वर सब जीवों का निर्माता अथवा पिता है, इसलिए सब जीव ईश्वर के पुत्र हैं। पिता अपने किसी पुत्र से भी अन्याय व पक्षपात नहीं करेगा। उसकी न्याय–व्यवस्था सब जीवों के लिए एक समान है। वह न किसी को अधिक देता है और किसी को कम। मनुष्य को यह निश्चित समझ लेना चाहिए कि जैसा कर्म करूंगा उसका फल ईश्वर वैसा ही देगा। ईश्वर सर्वव्यापक है, सर्वशक्तिमान है और सर्वज्ञ है। इसलिए उसकी नजर से कोई नहीं बच सकता। यानी जो जैसा करेगा, ईश्वर अपनी न्याय व्यवस्था से वैसा ही फल निश्चित ही देगा। मनुष्य को भी ईश्वर की न्याय–व्यवस्था से वैसा ही फल निश्चित ही देगा। मनुष्य को भी ईश्वर की न्याय–व्यवस्था पर पूर्ण विश्वास रखना चाहिए। जब हमें पूर्ण विश्वास हो जायेगा कि यदि मैं कोई बुरा काम करूँगा तो ईश्वर उसका फल दुःख के रूप में देगा ही, तो हम बुरा काम करने से डरेंगे। यदि हमको ईश्वर की न्याय–व्यवस्था पर पूर्ण विश्वास होता है तो हमें दुःख सहने की शक्ति भी मिलती है, कारण हम यह सोचेंगे कि यह दुख जो मुझे मिल रहा है। यह मेरे किसी किये हुए बुरे कर्मो का ही फल है। ईश्वर मेरे ऊपर कोई अन्याय नहीं कर रहा है, जब ईश्वर के घर में अन्याय करना है ही नहीं तो वह मुझ पर अन्याय क्यों करेगा? मुझे बिना बुरे कर्म किये दुःख क्यों देगा? जब मुझे दुःख दिया है तो मैंने कभी बुरा काम किया होगा, तो उसके परिणाम स्वरूप मुझे सन्तोष के साथ दुःख सहना चाहिए और आगे के लिए मैं अच्छे काम करूँ ताकि मुझे दुःख न मिले।

अब प्रश्न उठता है कि अच्छे और बुरे कर्म कौन–कौन से हैं। इसका उत्तर यही है कि ईश्वर जितने भी काम करता है वह बिना स्वार्थ के जीव के हित व कल्याण के लिए ही करता है। सभी मनुष्य ईश्वर की सन्तान हैं। इसलिए उसे भी अपने पिता के समान ही काम करने चाहिए। जिन कामों से दूसरों का हित व प्रसन्नता प्राप्त होती हो, वे सभी काम अच्छे हैं जैसे दया, करुणा, परोपकार, स्नेह, प्रेम, सच्चाई, ईमानदारी, निष्पक्षता आदि। ये सब अच्छे कर्म हैं। इनसे दूसरों का भला होता है और उनकी आत्मा में प्रसन्नता होती है। महात्मा व्यास के शब्दों में **''आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्''** जो काम अपनी आत्मा को पसन्द हो, वही काम दूसरों से भी करें। महात्मा तुलसीदास के शब्दों में **''परहित सरिस धर्म नहीं भाई, पर–पीड़ा सम नहीं अधमाई''**। गीता के शब्दों में **''अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतंकर्म शुभाशुभम्''** किये हुए कर्मो का फल अवश्य मिलता है। तो यही समझकर हमें अच्छे कर्म करने चाहिए ताकि हमें दुःख न मिले। इसके विपरीत द्वेष, ईर्ष्या, छल, कपट, पक्षपात, हिंसा आदि बुरे कर्म हैं। इनसे दूसरों को कष्ट होता है। इसलिए ये कर्म न करें।

2. वेदों पर पूर्ण विश्वास रखें:– हम ऊपर लिख चुके हैं कि ईश्वर सभी जीवों को पैदा करने वाला है। इसलिए ईश्वर सब का पिता हुआ और सभी जीव ईश्वर के पुत्र हुए। जब हम संसारिक पिता पर ही इतना विश्वास करते हैं कि वह हमारा कभी अशुभ चिन्तक नहीं हो सकता तो हमें परम् पिता परमात्मा पर तो जरूर ही पूर्ण विश्वास रखना चाहिए कि ईश्वर हम पर कभी भी अन्याय नहीं कर सकता। ईश्वर ने वेद–ज्ञान सृष्टि के आरम्भ में इसीलिए दिया था कि मनुष्य अपने जीवन में किस प्रकार रहे जिससे वह अपने व दूसरों के जीवन को सुखी व आनन्दित बना सकें। वेद ईश्वर की संविधान की पुस्तक है जो मनुष्यों को जीने की कला सिखाता है। जिस प्रकर संविधान से राष्ट्र चलता है उसी प्रकार यदि मनुष्य वेदों के अनुसार चले तो वह अपने जीवन को पूर्ण सुखी व शान्तिमय बनाकर मोक्ष प्राप्ति की ओर अग्रसर हो सकता है जो जीवन का अन्तिम लक्ष्य है और यह मनुष्य योनि में ही संभव है। इसलिए जीव को पहले अपने शुभ कार्यों से मनुष्य योनि में आना पड़ेगा फिर वह अपने जीवन को वेदानुकूल बनाने से वह मोक्ष पाने का अधिकारी बन सकेगा। मोक्ष प्राप्ति का अन्य कोई मार्ग नहीं । जब हमें ईश्वर पर पूर्ण विश्वास हो तो हमें उसके बनाए वेदों पर भी पूर्ण विश्वास रखना चाहिए।

3. महर्षि दयानन्द पर पूर्ण विश्वास रखना:– जो व्यक्ति केवल परोपकार की भावना से ही काम करता है, जिसका अपना कोई स्वार्थ नहीं होता, ऐसा व्यक्ति कुछ कहेगा या लिखेगा, वह सब मनुष्य मात्र ही नहीं बल्कि प्राणी मात्र के लिए लाभदायक व कल्याणकारी होगा। उसके कहे व लिखे पर बिना किसी सन्देह व शंका किये मान लेना चाहिए और उसके अनुसार चलना चाहिए। महर्षि दयानन्द एक ऐसे ही महामानव थे, जीवन भर परोपकार के लिए जीये और परोपकार के लिए ही मरे। वे 18 घण्टों की समाधि से अभ्यस्थ हो चुके थे जो उनकी मोक्ष प्राप्ति के लिए पर्याप्त था। यानी महर्षि अपनी 18 घंटों के समाधि से ही मोक्ष प्राप्त कर सकते थे। परन्तु स्वामी जी केवल स्वयं ही मोक्ष में नहीं जाना चाहते थे। वे चाहते थे कि सब मनुष्य मोक्ष को प्राप्त करें। मोक्ष प्राप्ति के लिए वेदानुकूल चलना बहुत जरूरी है। इसीलिए महर्षि ने वेदों का ज्ञान जानने की विधि अपने सद्गुरु स्वामी विरजानन्द की गोद में लगभग तीन साल बैठ कर सीखी, फिर वेदों का तथा वेदों संबंधी सभी ग्रन्थों का अध्ययन किया। वेद–ज्ञान की श्रेष्ठता जानने के लिए, इनके विपरीत ग्रन्थों का भी स्वाध्याय किया। जब यह जान लिया कि वेदानुकूल चलने से ही मानव मात्र अपने जीवन को पवित्र व महान् बनाकर जीवन का अन्तिम लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त कर सकता है, तब स्वामी जी ने अपने पूरे जीवन में वेदों का प्रचार व प्रसार किया और लोगों से वेद मार्ग अपनाने का आग्रह किया जिससे वे भी अपने जीवन को स्वच्छ व पवित्र बनाकर मोक्ष को प्राप्त कर सकें। स्वामी जी ने वेदों का केवल प्रचार ही नहीं किया बल्कि अनेकों ग्रन्थ भी लिखे। इसलिए हर व्यक्ति को ऐसे उपकारी व्यक्ति के लिखे ग्रन्थों को पढ़ना चाहिए और उसके लिखे पर पूर्ण विश्वास करके तथा उनके अनुसार चलकर अपने जीवन को तथा अन्यों के जीवन को सुखी व पवित्र बनाना चहिए।

4. अपनी आत्मा की आवाज पर विश्वास करना:– महर्षि दयानन्द के अपने अमर ग्रंथ **''सत्यार्थ प्रकाश''** में लिखा है कि मनुष्य की आत्मा सत्य व असत्य को जानने वाली होती है। इसलिए जब मनुष्य कोई बुरा काम करने की सोचता है या करने के लिए उद्यत होता है तब उसकी आत्मा उस काम को न करने को कहती है और उसके मन में भय, लज्जा व शंका उत्पन्न कर देती है ताकि वह उस काम को न करे। परन्तु वह अपने हठ, दुराग्रह, अज्ञान व विवशता के कारण कर लेता है तब भी उसको कई बार न करने की कहती है। जब वह अभ्यस्त हो जाता है तब आत्मा की आवाज आनी बन्द हो जाती है। इसी प्रकार जब मनुष्य कोई अच्छा काम करने की सोचता है या करने के लिए तैयार होता है, तब भी आत्मा उसको वह काम करने के लिए उत्साहित व प्रेरणा करती है और उसके मन में उत्साह, आनन्द व प्रसन्नता की अनुभूति कराती है ताकि वह उस अच्छे काम को जरूर–जरूर करे। महर्षि दयानन्द के अनुसार यह आत्मा की आवाज ईश्वर की तरफ से होती है। इसलिए मनुष्य को अपनी आत्मा की आवाज के अनुसार उसके ऊपर पूर्ण विश्वास रख कर वह कार्य जरूर–जरूर करना चाहिए ताकि वह बुराइयों से बच सके और अच्छाइयों को अपना सके जिससे वह अपने जीवन को सुधार कर उन्नति की ऊँचाइयों को आसानी से छू सके।

180 महात्मा गांधी रोड,(दो तल्ला)
कोलकाता–700007
फोन न. 22183825, 64505013(ऑफिस)
26758903 (रेजि.) मो.

☞ पृष्ठ 06 का शेष

सम्बन्ध

जोड़ने में पूर्णतया स्वतंत्र हैं। ईश्वर ही हमारी माता, हमारा पिता, राजा, न्यायाधीश, सखा एवं बन्धु है। सच्चा सखा व बन्धु उसे माना जाता है जो संकट की घड़ी में साथ न छोड़े और यथा सम्भव सहायता भी करे। इस परिभाषा से ईश्वर खरी कसौटी पर उतरता है। सहायता करना तो ईश्वर का स्वभाव ही है। ईश्वर जीव के मन, वाणी और शरीर से किये जाने वाले सभी कर्मो को जानता है और हमारे अत्यंत गुप्त भेद किसी पर प्रकट नहीं करता। ईश्वर के गहन रहस्यों को जीव अल्प बुद्धि होने के कारण जान भी नहीं सकता। ईश्वर का स्वरूप भूः है, दुःखों से छुड़वाने वाला है, साथ ही स्वः है, सुखों को देने वाला है। ईश्वर स्वयं और अपने बनाये भिन्न–भिन्न पदार्थों से हमारी सहायता और रक्षा कर रहा है जिसे हम दैवी सहायता मानते हैं। ईश्वर के साथ हमारे सम्बन्ध नित्य एवं अनादि काल से हैं। अज्ञानता के कारण मायावी चकाचौंध में ईश्वर को भूल जाते हैं। विडम्बना तो यही है कि हम सांसारिक सम्बन्धों को निभाने में प्रायः सतर्क रहते हैं कि हमारे व्यवहार की छोटी सी भूल के कारण सम्बन्धों में शिथिलता न आ जाए परन्तु ईश्वर के प्रति अपने व्यवहार में उतने चौकन्ने नहीं रह पाते। अविद्या के कारण ईश्वर से दूरी बना लेते हैं। ईश्वर हर समय और हर स्थान पर हमारे साथ है, इस को भूल जाते हैं कि ईश्वर सर्वव्यापक है और उस का आनन्द भी सर्वव्यापक है, उस के साथ सम्बन्ध न बना पाने के कारण हम उसके आनन्द को ग्रहण नहीं कर पाते। जिस सुख की आत्मा को तलाश है, वह आनन्द तो केवल ईश्वर से सम्बन्ध बनाने से ही मिल सकता है। एक कवि के शब्दों में.....

प्यारे प्रभु से जिस का सम्बन्ध है।
उसे हरदम आनन्द ही आनन्द है।।

786/8 अर्बन एस्टेट,
करनाल 132001

thearyasamaj.org

ज्ञान का स्रोत

● स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती

(गतांक से आगे)

सिकन्दर के समय से भारत में यूनानवासियों का आवागमन आरंभ हो चुका था। यूनान और मध्य–पूर्वीय देशों के व्यक्तियों के पास ज्ञान–विज्ञान का भण्डार भी था, जिसे शदियों पूर्व उन्होंने भारत से प्राप्त किया था, पर बाद को जिसे उन्होंने अपने ढंग से विकसित भी किया था, यूनानियों की मूर्ति कला अद्वितीय थी, जिसके सुन्दर उदाहरण अब भी एथेन्स (एक्रोपोलिस) में विद्यमान हैं। यूनानी मूर्तिकला का आर्यावर्त्त में भारतीयकरण भी हुआ। यूनान में देवालय भी थे, जिनमें वेदों के देवताओं को मूर्तिमान् कर दिया गया था–तीन लोकों के देवता पृथिवी के, अन्तरिक्ष के और द्यौलोक के (अग्नि, वायु और आदित्य, और इनके साथ के अन्य) यूनानी कलाकारों की प्रतिभा द्वारा मूर्तिमान किये जा चुके थे। इनमें से अनेक देवताओं की मूर्तियाँ भारतीयकरण के परिवेश में भारत के मन्दिरों में भी स्थापित होने लगीं। मध्य–पूर्वीय देशों से यौन–उपासना भारत में भी आयी, जिसने मन्दिरों में शिवलिंग की स्थापना की, और लिंगोपासना की पौराणिक कथा को जन्म दिया। यूनान में मानवीय वृत्तियों को भी मूर्तिमान् किया गया है– काम, प्रेम, ईर्ष्या, पौरुष, लज्जा, करुणा आदि में। भारतीय कलाकारों ने इस प्रकार की मूर्तियों का भी शिल्प आरंभ किया, जिसके परिणामस्वरूप कामदेव और उसका धनुष, सरस्वती और उसकी वीणा एवं सरस्वती का वाहन, लक्ष्मी और उसका उलूक, शिव और उसके गण, यम और मृत्यु, यमराज और चित्रगुप्त, सूर्य और उसके रथ, और रथ में जोते हुए घोड़ों की मूर्तियाँ, कालचक्र, स्वर्ग और नरक इन सभी को मूर्तियों के रूप में आलोकित किया गया। चारों वेदों की मूर्तियाँ बनीं और संगीतज्ञों ने राग–रागनियों को भी मूर्ति और चित्र द्वारा व्यक्त किया। मूर्ख जनता धीरे–धीरे मूर्तिपूजक हो गई, उसने गंगा की भी मूर्ति बना डाली और यमुना की भी, और धीरे–धीरे मूर्तियों की परमात्मा के स्थान में पूजा आरंभ हो गई, मध्य–पूर्वी देशों में ईसा और हजरत मोहम्मद के उपदेशों के फलस्वरूप मूर्तिपूजा बहुत कुछ समाप्त हो गई। (रोमन–कैथोलिक कुछ देशों में अब भी मूर्तिपूजक हैं, दन्तकथाओं को प्रोत्साहन देते हैं, पर पौराणिकों से कम ही है; मुसलमानों ने मूर्तिपूजा से बचने का अद्वितीय प्रयत्न किया पर कब्र–परस्ती में और अन्धविश्वासों में वे भी फैल गए।) भारतवर्ष में पेड़ों और चौरास्तों, नागों और रीछ, भालू और पक्षियों की पूजा भी धीरे–धीरे प्रचलित हो गई।

मूर्तिपूजा का समस्त इतिहास बड़ा मनोरंजक है– मूर्तिपूजा के प्रचलन और पोषण के भिन्न कारण बने– 1. नास्तिक धर्मों का (जैनियों और बौद्धों का) प्रभाव, 2. मध्य–पूर्वीय देशों और विशेषतया यूनानियों का प्रभाव, 3. कलाकारों की कल्पना का प्रभाव (कविता, नाटक, चित्रकला और मूर्तिकला संगीत कला, नृत्य कला, इन सबने मूर्तिपूजा को प्रोत्साहन दिया), 4. पौराणिक दन्तकथाओं का प्रभाव।

मूर्तिपूजा निम्न हानियों की विशेषतया कारण बनी–1 द्वेष और वैमनस्य, शैव–वैष्णवों की कलह अब तक प्रसिद्ध है, 2 सम्प्रदायवाद– मूर्तियों की आकृतियों को लेकर देश के आर्य विभिन्न सम्प्रदायों में बंट गए, 3. पण्डा और पुरोहितवाद और साथ ही साथ मठाधीशों में शंकराचार्यों की स्वेच्छाचारिताओं का इतिहास, 4. स्वार्थपरायणता का नग्न नृत्य और मूर्ख जनता का शोषण, 5. अन्धविश्वासों और ढोंगों का आधिपत्य, 6. आस्तिकता का लोप, 7. पूजा के अधिकारी और अनधिकारी होने का ढोंग, देवालय प्रवेश–निषेध, अस्पृश्यता, जात–पाँत आदि कुरीतियों का प्रसारण।

मनुष्य यदि एक बार अन्ध–मान्यताओं में विश्वास रखने लगे, तो फिर उसका विवेक नष्ट हो जाता है। इस विवेक के नष्ट होने के फलस्वरूप यूनान देश के सम्पर्क से भारत में तीन कुरीतियों का प्रादुर्भाव हुआ– 1 प्रारब्धवाद, 2 फलित ज्योतिष और हस्तरेखा शास्त्र, 3 शकुन–अपशकुनवाद। स्वामी विवेकानन्द ने भी अपने विदेशी भाषणों में इस बात की पुष्टि की है। सिकन्दर के साथ और उसके बाद कई शतियों तक अनेक यूनानी विद्वान भारत में आये, और इस देश में ही बस गए। उनके साथ मध्य–पूर्वीय देशों से और भी विदेशी आये, वे भी इस देश के नागरिक बन गए। इन सब विदेशियों ने संस्कृत भाषा पढ़ी और संस्कृत में अनेक ग्रन्थ लिखे, जिन्हें हम भूल से भारतीय आर्यों की रचना मानते हैं। वराहमिहिर ज्योतिषी भी इन्हीं में से एक था जिसने **बृहत्संहिता** और **पञ्चसिद्धान्तिका** की रचना की। ब्रह्मगुप्त ने अपने प्रसिद्ध ज्योतिष् ग्रन्थ **ब्रह्मस्फुट सिद्धान्त** में इन विदेशी विद्वानों की कटु आलोचना की है। **बृहत्संहिता** में फलित ज्योतिष, शकुन–अपशकुन, देव–पूजन, भविष्य–अनुमान आदि अनेक अन्धविश्वासों को विस्तार से लेखनीबद्ध किया है। यह स्मरण रखना चाहिए कि ग्रह–नक्षत्रों के शुभाशुभ फलों का विचार, जन्मपत्री का बनाना, पंचांग के विविध विस्तार, शकुन–अपशकुन, ये सब भारतीय दर्शन की कल्पना नहीं हैं, और न आर्यावर्तीय ऋषियों ने परवर्तीकालीन इन मान्यताओं को प्रश्रय दिया। भारतीय दर्शन पुरुषार्थवाद में विश्वास रखता है – मध्य–पूर्वीय देशों में व्यक्ति पूर्वाग्रही, दन्तकथाओं के विश्वासी और प्रारब्धवादी थे। उनके सम्पर्क से यह दोष हमारे देश में छूत की बीमारी के समान उग्ररूप से फैल गया। विवेकानन्दजी लिखते हैं कि यूनानी हमारे देश की सच्ची **गणित ज्योतिष** अपने देश में ले गए, और इस विद्या की उन्होंने अपने देश में अच्छी वृद्धि की थी, किन्तु वे अपने देश में प्रचलित **फलित ज्योतिष** हम भारतीयों के गले मढ़ गए, जिससे हम आज तक मुक्त न हो पाये। यह हमारे देश का दुर्भाग्य है।

पैगम्बरवाद और अवतारवाद इन दोनों ने अन्धविश्वासों का पोषण किया। ये दोनों वाद नास्तिकता के पोषक हैं– ऊपर से तो आस्तिक लगते हैं, पर तत्त्वतः ये नास्तिक हैं। अवतारवाद और पैगम्बरवाद ये दोनों **चमत्कारों** पर अवलम्बित हैं। जब तक कोई व्यक्ति चमत्कार न दिखा सके, तक तक उसे **पैगम्बर** नहीं कहा जा सकता, और अवतार भी तभी कहलावेगा जब कोई **अमानवीय** कार्य करके दिखा दें। राम अवतार हैं, क्योंकि रावण को उसने मारा। रावण क्या मनुष्य न था? मनुष्य को मनुष्य ने मार डाला और वह भी मानवीय अस्त्रों द्वारा तो कौन–सी अलौकिक बात हुई? राम ने कौन–सा ऐसा कार्य किया था जो मनुष्य नहीं कर सकता। भारत की आधुनिक राजनीति में संजय और इन्दिरा को जिन्होंने पराजित किया, वे भी मनुष्य हैं। कैसर और हिटलर को जिन्होंने पराजित किय, वे भी मुनुष्य थे। इन कार्यों की सिद्धि के लिए अवतार और पैगम्बर की क्या आवश्यकता है? राम की विशेषता स्थापित करने के लिए रावण में विशेषताओं की कल्पना की गई। उसे **वरदान** दिलाये गए– विचित्र परिस्थिति तैयार की गई, उसका मारा जाना इसीलिए विशेष पराक्रम माना गया। वरदान और अभिशाप की श्रृंखलाएँ आरंभ की गईं। वरदानों और आभिशापों ने कहानियाँ तो मनोरंजक बना दीं किन्तु देश को इनसे बड़ी हानि हुई। वरदान और अभिशाप वैदिक युग की कल्पना नहीं है। वैदिक ऋषि न वरदान देते हैं, न अभिशाप। पौराणिक ऋषि में अभिशाप और वरदान की क्षमता आयोजित की गई। महाकाव्यों की कला ने वरदान और अभिशाप को प्रश्रय दिया। राजा परीक्षित अभिशाप के वशीभूत होकर साँप से ग्रसित हुए, अभिज्ञानशाकुन्तल नाटक की अलौकिकता भी इसी प्रकार की है। नाटक तो सुन्दर बन गया, किन्तु शकुन्तला को दी गई अंगूठी नाटक की कल्पना की ही वस्तु रह गई– यथार्थ से कोसों दूर। हमारा मध्यकालीन साहित्य कला की दृष्टि से बड़ा ही उत्कृष्ट है, पर भारतीय प्रवृत्ति कला की कल्पना को कल्पना न मानकर जब यथार्थ मान लेने लगती है, तो दर्शनशास्त्र भी विकृत हो जाता है और कला भी सौन्दर्य से हीन हो जाती है। महाभारत का ऐतिहासिक कृष्ण बाद को प्रक्षिप्त संस्करणों में गीता का कृष्ण बना, उसके मुख से ''यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिः'' वाले वाक्य कहलाये गए, उसने विराट् स्वरूप अर्जुन को दिखाया, ''अहं'' (अस्मद् आदेश) शब्द के कलात्मक प्रयोग से ऐतिहासिक पुरुष को आदिपुरुष की समकक्षता में प्रस्तुत कर दिया गया। फिर भी गनीमत थी– अस्मद् आदेश का प्रयोग उपनिषद्–साहित्य में मान्य माना जाता रहा है, वर्णन करने की यह विशिष्ट साहित्यिक शैली है। ऋग्वेद में भी कुछ मंत्र अस्तमद्– आदेश में हैं। आगे चलकर पौराणिक युग में गीता के कृष्ण से भी काम न चला, तो व्यक्तित्व के साहचर्य में **राधा** के व्यक्तित्व की कल्पना की गई– गोपियों के साथ नाचने और वंशी बजानेवाला कृष्ण हो गया, साहित्य में स्वीकार्य श्रृंगार रस की अपेक्षा रस की सृष्टि परकीया में अधिक निखरती है– इस प्रकार की कल्पना की गई। परकीया में अधिक निखरती है– इस प्रकार की कल्पना की गई। परकीया श्रृंगार रस साहित्य का प्रबल अंग बन गया। श्रृंगार रस ने साहित्य में काव्य की दिशा को नया मोड़ दिया। राधा और कृष्ण नवीन कला के प्रतीक बन गए। भक्ति मार्ग में सूरदास ऐसे उच्चकोटि के कवियों ने राधा और कृष्ण के अवलम्बन से नए काव्य काल को जन्म दिया। उपनिषद् काल की नैष्ठिक नैतिक आस्था भक्ति–युग के नये प्रवाह के सामने फीकी–सी पड़ने लगी। अध्यात्म के परिवेश में विलास और भोग से संयुक्त श्रृंगार–भावना मन्दिरों में अपना नग्न नृत्य दिखाने लगी। देवालय भोगालय बन गए। महर्षि दयानन्द ने अपने ग्रन्थों में इसका अच्छा चित्रण किया है, क्योंकि उनका इन मन्दिरों के जीवन से पूर्ण परिचय था। वे पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने अपने साहित्य में देश के नैतिक पतन का इतना सुन्दर और सच्चा चित्रण किया है। आज भी इन मन्दिरों की यही अवस्था है। इनके पतित जीवन के नये–नये दृष्टांत बराबर ही रहस्योदघाटित होते रहते हैं। देवता, गुरु, भगवान् और आचार्य इनकी संख्या में तब से आज तक वृद्धि होती आ रही है। गौरांग महाप्रभु का अवतार मुसलमान शासकों के अन्याय से बचने के लिए ही नहीं हुआ, इसका एक और लक्ष्य भी था। गौरांग महाप्रभु गोरे रंग के थे, अतः ये राम और

शेष पृष्ठ 11 पर

thearyasamaj.org

विभिन्न आन्दोलनों के आइने में आर्य समाज

● डॉ. अशोक आर्य

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने जिस आर्य समाज की स्थापना सन् 1875 ईस्वी को बम्बई के काकड़वाड़ी क्षेत्र में की थी, वेद धर्म पर आधारित यह आर्य समाज एक सुधार आन्दोलन के नाम से जाना गया क्योंकि इस समाज में फैल रहे अन्धविश्वासों, कुरीतियों तथा रूढ़ियों में आवाज़ उठाना आवश्यक ही था। इस कारण यह समाज एक जनान्दोलन बन कर कार्यक्षेत्र में सामने आया। मुख्य कार्य सामाजिक होने के कारण आर्य समाज के सामने अनेक समस्याएं आई थीं, जिनके समाधान के लिए आर्य समाज को अनेक आन्दोलन भी चलाने पड़े। आओ इन आन्दोलनों के परिप्रेक्ष्य में आर्य समाज के विभिन्न कार्यों का विश्लेषण करें।

शिक्षा आन्दोलन

आर्य समाज का सर्वाधिक महत्वपूर्ण, प्रमुख व प्रथम आन्दोलन आर्य समाज का शिक्षा आन्दोलन जाना जाता है। स्वामी जी ने अपने जीवन काल में ही अच्छी तथा उच्च शिक्षा की आवश्यकता के साथ स्त्री शिक्षा की आवश्यकता को न केवल अनुभव ही किया बल्कि इसके प्रचार व प्रसार के लिए कार्य भी किया। स्वामी दयानन्द जी ने 30 अक्टूबर 1883 दीपावली के दिन जब इस धरती पर अन्तिम श्वास ली तो आर्य समाज एक बार तो अपने आपको अनाथ सा अनुभव करने लगा किन्तु शीघ्र ही स्वामी जी का सजीव स्मारक बनाने की एक योजना बनाई गई। इस योजना के अन्तर्गत लाहौर में दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कालेज की स्थापना की गयी। कालान्तर में यह एक अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षण संस्था के रूप में हमारे सामने है। इससे पूर्व प्रायः ईसाई स्कूल ही देश में कार्यशील थे जिनमें शिक्षा पाकर अर्ध ईसाई ही निकल रहे थे। दयानन्द ऐंग्लो वैदिक स्कूल तथा कालेज आरम्भ होने से इस पर कुछ अंकुश लगा, किन्तु इन संस्थाओं के अधिकारियों द्वारा मांसाहार का पक्ष लेने के कारण तथा सरकार परस्ती के कारण शीघ्र ही धर्म परायण आर्यों का मोह भंग हुआ तथा गुरुकुल शिक्षा पद्धति को आरम्भ किया गया। ये गुरुकुल शुद्ध आर्ष पद्धति से शिक्षा और स्वदेशी का कार्य करने लगे। गुरुकुल की इस शुद्ध प्राचीन शिक्षा विधि ने देश को उच्च कोटि के सुधारक, शिक्षक, राजनेता, पत्रकार, लेखक व विचारक दिये, जिनके सहयोग से देश को बहुत लाभ हुआ तथा देश का नाम आगे बढ़ा तथा देश स्वाधीनता की ओर बढ़ने लगा। आज देश में सैकड़ों ही नहीं हजार से भी अधिक गुरुकुल जन जन को सन्मार्ग देने का कार्य कर रहे हैं।

स्त्री शिक्षा नारी उद्धार

इस समय से पूर्व लड़की पैदा होना बहुत बुरा माना जाता था। इसे जन्म लेते ही मार दिया जाता था और यदि कोई कन्या जीवित भी रह जाती तो उसे शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार न था। वेद मन्त्र को पढ़ना तो क्या सुनना भी कन्या के लिए मना था। यदि कोई कन्या गलती से वेद मन्त्र को सुन लेती तो दण्ड स्वरूप उस के कान में सीसा डाला जाता था। जिस माता ने मानव का नव निर्माण करना होता हो, उस माता का इतना अपमान भला महर्षि कैसे सहन कर सकते थे। उन्होंने महिला उद्धार के लिए जहां विधवा विवाह आरम्भ करते हुए बाल विवाह तथा बहु विवाह व सती प्रथा का विरोध किया वहां नारी शिक्षा पर बल देते हुए इनकी शिक्षा के लिए भी स्कूल व गुरुकुल खोले। आरम्भ में तो स्वामी जी तथा आर्य समाज का इस के लिए खूब विरोध हुआ किन्तु आज ये विरोधी भी नारी शिक्षा का कार्य कर रहे हैं तथा नारी निरन्तर प्रगति की ओर अग्रसर होते हुए बड़े बड़े पदों पर आसीन है।

राजनैतिक आन्दोलन तथा सरकार का कोप

आर्य समाज की प्रगति के साथ ही शुद्धि तथा दलितोद्धार आन्दोलनों ने देश तथा समाज की दिशा ही बदल दी। इससे ईसाई व मुसलमान के साथ साथ पौराणिक भाई भी भड़क उठे। अतः इन लोगों ने यत्नपूर्वक आर्य समाज को राजद्रोही संस्था सिद्ध करने का प्रयास किया। कुछ आर्यों के देश निर्वासन से इन्हें इस प्रचार में सहायता भी मिली। क्रान्तिकारी आन्दोलन में भी आर्यों की गणना होने लगी। गुरुकुल कांगड़ी को भी सन्देह के घेरे में लाया गया। वास्तव में स्वामी दयानन्द जी की देशभक्ति के कारण प्रत्येक आर्य देशभक्त था धार्मिक था। इस कारण आर्यों को सरकारी सेवा से निकाला जाने लगा। अनेक आर्यों के घरों से ओ३म् पताकाएं उतरवाई गईं। अब आर्य होना खतरा था। आर्य समाज के लिए यह एक बहुत बड़ी परीक्षा का समय था।

पटियाला में आर्यों पर राजद्रोह

पटियाला के महाराजा की मृत्यु के पश्चात् नवनियुक्त महाराज पर दबाव बनाकर अंग्रेज ने 85 प्रमुख आर्यों पर देशद्रोह का केस 11 अक्टूबर 1909 ईस्वी को बनवाया। बार बार की पेशी के पश्चात् बड़ी कठिनाई से पुलिस 13 दिसम्बर को अभियोग पत्र प्रस्तुत कर पाई। किसी वकील को इस केस की पैरवी की अनुमति नहीं दी गई। इस काण्ड में पकड़े गये आठ आर्य तो ऐसे थे जिनका नाम अभियोग पत्र में था ही नहीं। अदालत की आपत्ति पर चार नए अभियोग पत्र तैयार किये गये और चार त्यागे गये। तीस अभियुक्तों को निर्दोष कहते हुए छोड़ दिया गया। काफी समय केस चला और अन्त में अकारण बनाये गये इस अभियोग में महाराज की आज्ञा से सब को छोड़ते हुए सब को रियासत से बाहर जाने का आदेश भी दिया गया।

पटियाला का दूसरा केस

जब सिखों ने आर्य समाज के विरोध में बहुत सी पुस्तकें लिखीं तो इनका उत्तर देना आवश्यक हो गया। अतः 1914 में आर्य समाज, भदौड़, जिला पटियाला के प्रधान मा. रौनकराम "शाद" ने "खालसा पन्थ की हकीकत" नामक पुस्तक लिखी। इस पर मा. रौनक राम जी म. विशंभर दत्त जी पर अभियोग खड़ा कर जेल भेज दिया गया। जमानत स्वीकार न की गई। अभियोग चला, किसी की कुछ न सुनी गई तथा दोनों को एक एक वर्ष का कारावास तथा दो रुपए जुर्माना हुआ किन्तु इन यातनाओं के पश्चात् भी आर्यों की दृढ़ता में कहीं कोई कमी न आई।

अछूतोद्धार आन्दोलन

भारत की अनेक जातियां ऐसी थीं, जिन्हें किसी प्रकार के सामाजिक अधिकार प्राप्त न थे। इन्हें नीच समझा जाता था। मन्दिरों आदि में इनका प्रवेश निषेध था। परिणामस्वरूप यह लोग विधर्मी हो रहे थे। आर्य समाज ने इनके उद्धार का कार्य आरंभ किया। आर्यों का भारी विरोध हुआ किन्तु आर्यों ने इस की चिन्ता न की। आर्यों पर भारी अत्याचार हुए किन्तु आर्यों ने चिन्ता किये बिना इनके लिए कार्य जारी रखा तथा बिछुड़े भाइयों को शुद्ध भी किया जाने लगा। कुछ काल में ही इन जातियों को आर्य बनाकर शिक्षित कर उच्च बना दिया, आर्य बना दिया।

शुद्धि आन्दोलन

आर्य समाज का शुद्धि कार्य भी एक महत्वपूर्ण कार्य रहा है। इसके बिना तो जाति का आधार ही समाप्त हो रहा था। आर्य समाज ने इसे एक आन्दोलन के रूप में लिया और इसके माध्यम से बिछुड़े भाई बहिनों को लौटाने का कार्य आरंभ किया। इस कार्य का आरम्भ स्वामी जी ने स्वयं अपने हाथों से किया। सर्वप्रथम स्वामी जी ने जालन्धर में एक ईसाई, देहरादून तथा लाहौर में एक मुसलमान को शुद्ध कर इस कार्य को आरम्भ किया था। इससे पूर्व 756 ईस्वी में जब मुहम्मद बिन कासिम के पश्चात् प्रतिहारी राणा नागभट्ट गद्दी पर आसीन हुए तो उन्होंने सब मुसलमानों को देश से बाहर निकाल दिया तथा जो भारतीय मुसलमान हो गये थे, इन्हें पुनः आर्य बनाया। 31 दिसम्बर 1922 ईस्वी को आगरा की क्षत्रिय सभा में एक प्रस्ताव से बलात् मुसलमान बनाए गए लोगों को वापिस लाने का निर्णय हुआ। इस हेतु भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा बनाई गई तथा स्वामी श्रद्धानन्द जी के नेतृत्व में जबरदस्त शुद्धि चक्र चलाया गया। मुसलमान, कांग्रेस और सरकार तीनों के विरोध की चिन्ता किये बिना हजारों को शुद्ध किया। यह आन्दोलन आज भी निरन्तर कार्यशील है। इससे पूर्व मालाबार में भी मोपला विद्रोह में हिन्दुओं को मुसलमान बनाया गया था, इन्हें लौटाने का कार्य हो चुका था। 1937 से 1940 के बीच मध्य भारत के लगभग चालीस हजार भीलों को, जो ईसाई हो चुके थे, भी शुद्ध किया गया। इनके लिए स्कूल भी खोले गये। मध्य प्रदेश के बहाई मुसलमानों ने लाखों को मुसलमान बना लिया था सन् 1961 में एक कमेटी बनाकर यहां शुद्धि कार्य आरंभ किया जो आज भी चल रहा है।

जन सेवा तथा रक्षा आन्दोलन

आर्य समाज का मुख्य कार्य जन सेवा के होने का कारण जहां कहीं दुर्भिक्ष पड़ा, प्लेग फैला, अकाल पड़ा, बाढ़, भूकम्प आदि कोई भी त्रासदी आई, वहां अपनी सेवाओं से सहायता की। चाहे वह कांगडा का भूकम्प था, अवध, गढ़वाल, उड़ीसा, 1921 में पंजाब के शिमला, कांगडा तथा जम्मू का दुर्भिक्ष, मालाबार का हत्याकाण्ड, कोहाट में पठानों के हिन्दुओं पर अत्याचार, काश्मीर के पुन्छ, मीरपुर, कोटली आदि स्थानों पर हिन्दुओं की हत्याएं व लूटपाट, 1934 में बिहार का विनाशकारी भूकम्प, 27–28 मई 1934 में क्वेटा के प्रलयंकारी भूकम्प, उड़ीसा की सुनामी, गुजरात का भूकम्प और गत वर्ष हुई उत्तराखण्ड की कपड़ा त्रासदी आदि के अवसर पर, भोजन, दवाओं, कुओं की सफाई आदि के माध्यम से लोगों की सहायता की।

सत्याग्रह आन्दोलन

आर्य समाज की समय समय पर अनेक परीक्षायें भी हुईं, जिनमें आर्य समाज ने सफलता प्राप्त की। ऐसी परीक्षाओं में सत्याग्रह आंदोलन प्रमुख रहे। इनमें सबसे प्रमुख रहा हैदराबाद का सत्याग्रह आन्दोलन। हैदराबाद में मुस्लिम निजाम का राज्य था। वहां पर हिन्दुओं से सामाजिक अधिकार छीन लिये गये थे। प्रतिदिन हिन्दू, मन्दिर गिराये जा रहे थे, हवन करने व घर पर ओ३म् का झण्डा तक भी नहीं लगाने दिया जाता था। लड़कियों को बलात् उठा लिया जाता था। बलात् रूप से लोगों को मुसलमान बनाया जा रहा था, हिन्दुओं को प्रतिदिन कत्ल करने की घटनायें बढ़ रही थीं, घरों को आग लगाई जा रही थी, किसी प्रकार की वार्ता का कोई लाभ नहीं हो रहा था। अन्त में सत्याग्रह आन्दोलन का निर्णय हुआ। इसमें हजारों आर्यों ने देश के विभिन्न भागों से आकर सत्याग्रह किया तथा जेल में

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

thearyasamaj.org

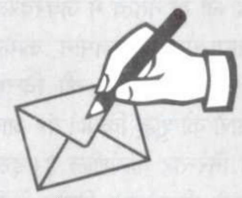

पत्र/कविता

आर्य बन्धु बधाई के पात्र

विश्व में किसी भी आर्य समाज के बाहर भिखारियो की भीड़ देखने को नहीं मिलेगी ऐसा क्यों? अजमेर में स्वामी दयानन्द जी ने एक धार्मिक संस्था के बाहर भिखारियों की भारी भीड़ देखकर कर विभिन्न आर्य प्रवचनों में देशवासियों से अपील की कि भीख मांगने वालों से ज्यादा भीख देने वाले मानवता के अपराधी है। यदि भीख देने की प्रवृत्ति पर विराम लग जाये तो भीख मांगने वाले अपने आप ही लुप्त हो जायेंगे? यह खेद है कि हमारे समाज में भीख देकर स्वर्ग की कामना करने की प्रवृत्ति धार्मिक विद्वानों के प्रत्येक मानव के मन में बैठा दी है जो एक गलत परम्परा है। यदि आप गरीब, असहाय या साधनहीन की मदद करना चाहते हैं तो उसको आश्रय देकर स्वावलम्बी बनायें। भीख मांगने की प्रवृत्ति हमारे देश पर कलंक है और इसके लिए देश और समाज के धार्मिक विद्वान दोषी हैं जो भीख देने की परम्परा को प्रोत्साहित करते हैं। स्वामी दयानन्द जी के इस उपदेश को समस्त आर्यजन सम्मान देकर गलत परम्परा को रोकने का प्रयास कर रहे हैं।

कृष्ण मोहन गोयल
अमरोहा–244221

****

एक साथ सबको कुछ देना है जोखिम का काम

एक साथ सबको कुछ देना, है जोखिम का काम
भीड़ भड़क्का, धक्कम मुक्का होता सुबहो–शाम।।

एक साथ सूरज प्रकाश देता है सारे जग को,
प्रतिदिन भोजन की करे व्यवस्था, मानव खगव विध्य को
अपने श्रम उधम की पाते हैं सबही इनाम।।

अन्न फल फूल से लाभ उठाते हर सक्रिय प्राणी
भिन्न–भिन्न स्थान स्थिति पर एक साथ मनमानी
बिना मूल्य कुछ मिल जाता है, कभी चुकाना पड़त दाम

जल से जीवन, वायु से श्वसन, अग्नि प्रभाव से उष्मा,
गगन धरा पर मन लुभावनी फैली आकर्षक सुषमा।।
उबड़ खाबड़ रंग बिरंगे आवश्यक हैं तमाम।।

मेड़ बांध कर अपनी वस्तु को हम चिहिन्त करते हैं ले
नहीं पाये कोई दूसरा ऐसी व्यवस्था करते हैं।
समझ न पाते दान–भोग और नाश का क्या अंजाम

प्यारे प्रभु ने एक साथ देने की कर दी व्यवस्था,
भिन्न–भिन्न रंग–रूप–चाव से करते सभी समीक्षा
दाता दीन भिखारी रोगी कुशल मूर्ख पैगाम।।

जीवन मृत्यु हँसी खुशी मातम से होती परीक्षा
धन–बल और सम्राज्य बढ़ाकर बढ़ती मन में तितिक्षा
थक जाते हम पाकर सब कुछ फिर भी करते बदनाम।।

सत्यदेव प्रसाद आर्य 'मरूत'
नेमदारगंज (नावादा–बिहार) 805121

ओ३म्

देख मुझे होता विस्मय है।
पशु से पशु इतना कब डरते
खग से खग भी कब भय करते
किन्तु आज इस जग में देखो,
मानव से मानव को भय है
देख मुझे होता विस्मय है।।
पशु मानव का रक्षण करता
मानव उसका भक्षण करता
देश धर्म के नाम बहाता
रक्त–धार, कैसा निर्दय है
देख मुझे होता विस्मय है।।
प्रकृति–वाद का शीघ्र ह्रास हो
आध्यात्मिकता का विकास हो
अखिल विश्व में फिर 'प्रकाश' शुचि
शान्ति सौख्य का युग निश्चय है
देख मुझे होता विस्मय है।।

प्रकाश चन्द, संकलन टीकाराम आर्य
आर्य नगर–डिमौली
पत्रालयः महीउद्दीन पुर–जनपद मेरठ उ.प्र.

सत्यान्वेषण का आरम्भ और अन्त

सत्य समस्त सद्गुणों का मूल है तथा इसमें सात गुण मुख्य रूप से शामिल हैं–अहिंसा, माधुर्य, मित्तभाषाण, सरलता, निर्भीकता, संकल्प तथा स्वाभाविक प्रेम। तीन अक्षरों से बना यह शब्द हमें बाहर एवं भीतर दोनों ओर से प्रकाशित करता है। इस सत्य शब्द का 'स' जहाँ अमरत्व का संकेत देते हुए चैतन्य का प्रतीक बनता है वहीं 'त्' वर्ण परिवर्तनशील एवं जड़ पदार्थों को संकेतित करता है तथा इन सब से ऊपर है 'य' वर्ण, जो इन दोनों –अनश्वर जीवात्मा तथा नश्वर पदार्थों का शासनकर्ता है।

सत्य वास्तव में वृक्ष के उन पत्तों की तरह है जिन्हें जो दृष्टि जिधर से देखती है, उसी सीमित क्षेत्र को परिपूर्ण मान बैठती है। सत्य के समग्र स्वरूप को देखपाना और उसे अंगीकार कर सकना अत्यंत दुष्कर कार्य है। प्रायः हम विचार करते हैं कि यदि सत्य के वास्तविक स्वरूप का निर्णय कर पाना ही दुष्कर कार्य है तो इसे जीवन में ग्रहण कर पाना तो और भी असाध्य कर्म होगा। यद्यपि इसमें कोई संदेह भी नहीं है परन्तु हमें जानना चाहिए कि पूर्ण सत्य है क्या? पूर्ण सत्य वही है जिसमें मन, वचन और कर्म तीनों समान हों। यदि हमारी वाणी हमारे मन की बातों का खंडन करती है अथवा हमारे कर्म हमारे मन व वाणी के विपरीत आचरण करते हैं तो निश्चय ही हमारा सत्य पूर्ण सत्य न होकर आंशिक सत्य होगा।

एक परम मनस्वी पुरुष का कथन है –सब साँच मिलें तो साँच है नहीं मिले तो झूठ अर्थात् यदि तेरा, मेरा, उसका–सबका सच एक ही हो तभी वह सच है, अन्यथा झूठ के अतिरिक्त कुछ नहीं। इस सत्य में यदि मन, वचन और कर्म तीनों की सच्चाई मिले तभी वह परम सत्य है। वह परम सत्य समस्त चराचर जीवों के लिए स्वीकार्य होता है। सत्य वास्तव में ऐसा ढाँचा है जिसमें से अंश मात्र भी यदि निकाल दिया जाए तो वह सत्य नहीं रहेगा और यदि उसमें अंशमात्र भी अपनी ओर से जोड़ दिया जाए तब भी वह सत्य नहीं रहेगा। इस सत्य की प्राप्ति के लिये अभीप्सा, आत्म निरीक्षण, अन्वेषण, कष्ट सहिष्णुता और आत्मसमर्पण की दिव्य भावनाओं का होना अत्यावश्यक है। सत्यान्वेषण का प्रारम्भ व्यक्तिगत इच्छा की पूर्ति से भले ही होता है लेकिन उसका अन्त सदैव सर्वमंगल की भावना से परिपूर्ण होकर 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के रूप में ही परिणत होता है।

डॉ. श्रीमती अनु शर्मा
आर्य समाज, मॉडल टाऊन, लुधियाना
दूरभाष क्रमांक 2429783

****

thearyasamaj.org

☞ पृष्ठ 08 का शेष

ज्ञान का स्रोत

कृष्ण के समान विष्णु के काले अवतार तो हो नहीं सकते थे। उनके भक्तों ने उनका गोरापन देखकर एक नई कल्पना आरम्भ की – गौरांग के शरीर में राधा और कृष्ण इन दोनों के संयुक्त अवतार की कल्पना। कृष्ण यह तो मानते थे कि राधा के साथ भोग–सम्पर्क करने में उन्हें क्या दिव्य आनन्द मिलता है, पर वे यह न समझ पाये कि साथ–साथ सहभोग में राधा को किस प्रकार का आनन्द मिलता है। इस रस की अनुभूति के लिए कलियुग में उन्होंने इस प्रकार का विशेष अवतार लिया, जिससे वे एक ही शरीर में राधा और कृष्ण (पुरुष और स्त्री) दोनों के आनन्दों की अनुभूति कर सकें। वे राधा के अवतार थे, इसलिए गोरे थे। बंगाल के वैष्णव भक्तों को यह तर्क किस प्रकार सन्तुष्ट करता है, यह वे ही जानें। अवतारवाद के गोरखधन्धे नित्य नये रूप में हमारे सामने अब तक आ रहे हैं। केवल आर्य समाज ही ऐसी संस्था है, जो इस प्रकार के अन्धविश्वासों से हमें मुक्ति दिला सकती है। बालयोगेश्वर ने अवतारवाद की परम्परा में यदि अपने को भी नये युग का अवतार बताया, तो इसमें अनौचित्य ही क्या था! उसकी घोषणा थी, (जैसा मैंने उनके साहित्य में पढ़ा है), राम, कृष्ण, ईसा, बुद्ध और मुहम्मद अपने–अपने युग के अवतार और पैगम्बर थे, पर उनसे अब काम नहीं चल सका– अब तो इस नये युग में और नये संकट में मैं ही (अर्थात् बालयोगेश्वर ही) सक्षात् भगवान् हूँ। बालयोगेश्वर ने विदेश में आपना विवाह भी कर लिया (अच्छा ही हुआ), उसके प्रति कई प्रकार के आरोप भी हुए, पर कौन अवतार है जो इस प्रकार के आक्षेपों से सर्वथा मुक्त रहा है? इसीलिए भण्डाफोड़ होने पर भी बालयोगेश्वर के भक्तों की कमी नहीं हुई। उसके भक्तों की संख्या बढ़ती ही जा रही है।

साईं बाबा के विरोध में बंगलौर इन्स्टीट्यूट के प्रध्यापकों ने आवाज उठाई है। उसके चमत्कार कोई मूल्य नहीं रखते, किन्तु भारत की मूर्ख जनता का पोषण उन्हें अभी तक प्राप्त है। इस प्रकार के चमत्कारों की सिद्धि वैज्ञानिक युग की मान्यताओं के सर्वथा विपरीत है। पर हिन्दू भी चमत्कारों में विश्वास करता है और पैगम्बरों के अनुयायी भी। लगता है कि बीसवीं शती के नवीन युग ने हमारी आँखें अच्छी तरह नहीं खोली हैं। नये–नये ढोंग नये–नये रूप में हमारे सामने आ रहे हैं। योगी, भगवान, बाबा और गुरु इस युग के नये अवतार और नये पैगम्बर हैं। दोष उनका इतना नहीं जो ठगते हैं, दोष तो उनका है जो ठगे जाने के लिए तैयार बैठे हैं, और जिन्होंने विवेक की आँखें मूंद ली हैं। आज यदि ऋषि दायानन्द जीवित होते तो उन्हें सत्यार्थप्रकाश का एकादश समुल्लास नये ढंग से लिखना पड़ता, स्वातन्त्र्य के तीस वर्षों में भारत आगे नहीं बढ़ा, कई कदम पीछे हट गया है। चोरबाजारी, लूट और मक्कारी का रुपया देश में बहुत जमा हो गया है, और इसी धन से पिछले तीस वर्षों में विशाल और भव्य मंदिरों के निर्माण में प्रतियोगिता की दौड़ आरंभ हो गई है, शासन के अधिकारियों और धनाढ्य करोड़पतियों का आश्रय इन मन्दिरों को प्राप्त है, ये मन्दिर गैरकानूनी ढंग से धन कमाने का प्रायश्चित भी कराते हैं, और अपने को गैरकानूनी ढंग से धन कमाने का मार्ग भी प्रशस्त करते हैं। शासन के अधिकारी इन प्रपंच में सहयोग देकर अपने लिए भी सहज धन अर्जित करने का मार्ग निकाल लेते हैं। स्पष्ट शब्दों में यह कहूँगा कि वे स्वयं घूस खाते हैं और घूस खाने के बाद घूस देनेवालों की गैरकानूनी हरकतों को वे प्रोत्साहन देते हैं। किसी ने योगाश्रम खोल लिए हैं तो किसी ने देवालय बनाये हैं। कोई भारतवर्ष के भीतर प्रपंच रचता है, तो कोई देश के बाहर।

देश की परिस्थिति बड़ी विकट है, और हमें बड़ी निष्ठा के साथ सतर्क होकर स्पष्ट शब्दों में रूढ़ियों को तोड़ने के लिए कटिबद्ध होना होगा। महर्षि दयानन्द का विलक्षण व्यक्तित्व, उनकी तपस्या और साहस, उनका विवेक और जनता को अन्धकार से निकाल कर आलोक में लाने की निःस्वार्थ आकांक्षा– ये गुण सब में समाहित होना सरल कार्य नहीं है। मैं तो केवल यह प्रार्थना कर सकता हूँ

तमसो मा ज्योतिर्गमय।

इलाहाबाद–अगस्त, 1977 ई.

☞ पृष्ठ 09 का शेष

विभिन्न आन्दोलनों के...

गये। जेल की भयंकर यातनाओं से लगभग 29 आर्य शहीद हो गये। अन्त में आर्यों की सब बातें मान ली गईं और सफलतापूर्वक आन्दोलन समाप्त हुआ।

सिंध में सत्यार्थ प्रकाश आन्दोलन

1943 में सिन्ध की मुस्लिम सरकार ने सत्यार्थ प्रकाश के विरुद्ध आग उगलनी आरम्भ की तथा मुस्लिम लीग ने इस पर प्रस्ताव भी पास किया तथा वहां की सरकार ने 26 अक्टूबर 1944 को यह आदेश दिया कि "भारत रक्षा कानून की धारा 41 की उपधारा 1 के अनुसार स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा लिखित सत्यार्थ प्रकाश नाम की पुस्तक का मुद्रण प्रकाशन नहीं किया जा सकेगा यदि इससे चौदहवां सम्मुलास न निकाल दिया जावे।" सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने भी 20 फरवरी 1944 को इस आदेश के विरोध में कार्य आरम्भ कर दिया। अन्त में सत्याग्रह का निर्णय हुआ। जनवरी 1945 को अस्सी वर्षीय आर्य संन्यासी ने सत्याग्रह के लिए कूच किया तथा 14 जनवरी को सत्याग्रह के आरम्भ की घोषणा की गई। बस फिर क्या था! देश भर से आर्य कराची के लिए रवाना होने लगे। पांचवें दिन ही सरकार हिल गई। सत्यार्थ प्रकाश की जब्ती के आदेश वापिस ले लिये गये। इस के साथ ही आर्यों ने अपना आंदोलन रोक दिया।

इस प्रकार ही मध्य प्रदेश के सिहोर में भी सत्यार्थ प्रकाश पर लगे प्रतिबन्ध को वापिस लेना पड़ा।

लोहारू काण्ड

यहां भी हिन्दुओं पर निरन्तर अत्याचार होते थे। नवाब मुसलमान था। वह हिन्दुओं को उनके धार्मिक अधिकार नहीं देना चाहता था। 1944 ईस्वी में यहां आर्य समाज स्थापित हुई तथा 29 व 30 मार्च को इस समाज का उत्सव तय हुआ। इसी शोभायात्रा पर मुसलमानों ने आक्रमण कर दिया। इस में 40 आर्य बुरी तरह से घायल हुए। स्वामी स्वतंत्रानन्द जी के सिर पर कुल्हाड़ों से गहरे घाव हुए। अपराधियों पर केस के स्थान पर आर्यों पर ही केस दायर किये गये। 26 अप्रैल 1944 को मुकद्मा वापिस लिया गया तथा आर्य समाज को अपना कार्य करने की स्वतंत्रता दी गई।

धौलपुर का सत्याग्रह

जब धौलपुर का शासक आर्य समाज के एक भाग पर अपना शौचालय बनाना चाहता था तो झगड़ा खड़ा हो गया। इस पर स्वामी श्रद्धानन्द जी ने वहां सत्याग्रह आरम्भ कर दिया, साथ ही स्वामी जी ने निर्णय न होने तक अन्न जल ग्रहण न करने का भी संकल्प ले लिया। अन्त में शासन ने झुकते हुए अपने आदेश को वापिस ले लिया।

हिन्दी सत्याग्रह

देश की एकता के लिए आर्य समाज का प्रेम हिन्दी के लिए सदा ही अगाध रहा है। स्वामी जी ने अपना सब साहित्य हिन्दी में ही लिखा तथा आर्यों को सदा हिन्दी के ही प्रयोग का आदेश दिया। जब पंजाब की सरदार प्रताप सिंह कैरों की कांग्रेस की सरकार ने बलात् रूप से हिन्दुओं पर गुरमुखी लादने का निर्णय किया तो यहां हिन्दी रक्षा समिति की स्थापना कर समझौते का यत्न किया गया किन्तु सरकार की हठ ने कुछ न होने दिया। अन्त में सत्याग्रह आन्दोलन आरंभ किया गया। 30 मई 1957 को कैरों से बात करने गये पांच लोगों को पकड़ कर पुलिस युमनानगर छोड़ गई। दूसरा जत्था गया तो इसके साथ बुरा व्यवहार किया गया। इन्हें पीटा गया। इनमें से एक तो चार घण्टे तक बेहोश रहा। इन यात्राओं का कुछ भी फल न हुआ तो 10 जून 1957 को स्वामी आत्मानन्द जी ने सत्याग्रह की घोषणा कर दी। लगभग दस हजार आर्य जेल गये। जेल में इन्हें मारा–पीटा जाता, तंग किया जाता, अनेकों की हड्डियां तोड़ी गईं, जेल में ही अनेक आर्य घायल हो गये, वीर सुमेर सिंह शहीद हो गये। आर्यों का सत्याग्रह निरन्तर प्रबल होता जा रहा था। अन्त में सरकार को झुकना पड़ा। नब्बे प्रतिशत मांगें मानी गईं तथा 10 प्रतिशत पर प्रेम से बैठकर चर्चा का संकल्प सरकार का हुआ जिसे आर्यों ने स्वीकार नहीं किया तथा आन्दोलन चलता रहा। 28 दिसम्बर 1957 को सरकार ने सब मांगें मानकर सब कैदियों को रिहा कर दिया। लौटते हुए रेल दुर्घटना में सात आर्य वीर शहीद हो गये किन्तु सब फैसले होने के पश्चात् 8 फरवरी को जब विजय जुलूस निकाला जा रहा था तो इस पर गोली चला दी गई। इस में दो आर्य शहीद हुए। आन्दोलन में भाग लेने वाले कुछ आर्य वीरों को आन्दोलन की समाप्ति के बाद भी तंग किया गया। इनमें हमारे प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु भी एक थे। इस आन्दोलन में कुल 18 आर्य शहीद हुए। आन्दोलन समाप्त करने के लिए सरकार के साथ जो त्रिभाषी फारमूला लागू करने का निर्णय लिया गया, यदि वह लागू हो जाता तो आज देश में कोई भाषायी समस्या न होती किन्तु प्रान्तीय सरकारों ने धोखा किया और त्रिभाषी फार्मूले को लागू ही न होने दिया। इसी कारण आज देश में हिन्दी का बुरा हाल हो रहा है। तथा देश के संगठन की कड़ी टूट रही है।

गो रक्षा आन्दोलन

गो रक्षा के लिए भी आर्य समाज ने खूब कार्य किया तथा इसके लिए एक आन्दोलन भी चलाया किन्तु अब तक आंशिक सफलता ही मिल सकी है। आज भी गो रक्षा के लिए कार्य हो रहा है।

इस प्रकार आर्य समाज ने अपने अल्प से जीवन में अनेक आन्दोलन और अनेक जनहित के कार्य करते हुए हिन्दू समुदाय को एक नई दिशा दी तथा गर्व से अपना मस्तक ऊँचा कर चलने के लिए प्रेरित किया और आज भी कर रहे हैं। पिछले दिनों ही जब मुसलमानों ने सत्यार्थ प्रकाश पर मुकद्मा ठोका तो आर्यों ने जिस साहस के साथ इस का मुकाबला किया तथा विजयी हुए, यह वर्णनीय है। हम प्रत्येक परीक्षा में सफल हुए तथा आज भी अपना मस्तक ऊंचा कर आगे बढ़ रहे हैं।

104, शिप्रा अपार्टमेन्ट, कौशाम्बी 201010
गाजियाबाद उ.प्र.
दूरभाषः 0120–2773400,
09718528068

thearyasamaj.org

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11/6066/2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103/2015-17
POSTED AT N.D.P.S.O. ON 04-05/2/2015
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39/57

डी. ए. वी. बूढ़ पुर का उद्घाटन समारोह

बड़े ही हर्षोल्लास के साथ डी.ए.वी. खेड़ा खुर्द की नई शाखा डी.ए.वी. बूढ़ पुर का उद्घाटन डी.ए.वी. मैनेजिंग कमेटी के प्रधान 'आर्य रत्न' श्री पूनम सूरी के करकमलों द्वारा किया गया। इस उपलक्ष्य पर डी.ए.वी. परिवार के अन्य गणमान्य अतिथि श्री आर.एस.शर्मा, डॉ. निशा पेशिन (डायरेक्टर डी.ए.वी. सी.एस.सी) तथा विभिन्न डी.ए.वी. विद्यालयों के प्रधानाचार्यों की उपस्थिति ने इस अवसर में चार चाँद लगा दिए।

इस कार्यक्रम का आरंभ आर्यरत्न श्री पूनम सूरी जी के दवारा हवन और वैदिक मंत्रों के उच्चारण के साथ हुआ। श्री पूनम सूरी ने बच्चों को सूर्य के समान विश्व को प्रकाशित करने और अंधकार को दूर कर अच्छाइयों को फैलाने का संदेश दिया। उन्होंने विद्यार्थियों से कहा कि पवित्र मन से किया गया हवन विश्व का कल्याण और सकारात्मक ऊर्जा का प्रसार करता है। सभा में उपस्थित सभी गणमान्य व्यक्तियों ने बच्चों को जीवन में नैतिक मूल्यों सच्चाई, भाई चारा और सहिष्णुता, ईमानदारी आदि को अपनाने के लिए प्रोत्साहित किया

आर्य रत्न श्री सूरी जी ने विद्यालय का शिलान्यास किया और विद्यालय की पत्रिका 'एथिकल टाइम्स' का विमोचन भी किया।

विद्यालय के प्रधान श्री बलदेव जिंदल ने सभा को संबोधित किया तत्पश्चात विद्यालय की प्रधानाचार्या श्रीमती देविका दत्त ने उपस्थित गणमान्य अतिथियों को शाल और पौधा प्रदान कर सम्मानित किया।

वरिष्ठ साहित्यकार डॉ. सुन्दरलाल कथूरिया दिल्ली हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा सम्मानित

पुरुषोत्तम हिन्दी भवन में दिल्ली हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा आयोजित भव्य सम्मान समारोह में वरिष्ठ साहित्यकार एवं यशस्वी लेखक डॉ.सुन्दरलाल कथूरिया को शाल, प्रतीक–चिह्न, ग्रंथादि भेंट कर 'सम्मानित साहित्यकार' के रूप में सम्मानित किया गया। उन्हें यह सम्मान पूर्व चुनाव आयुक्त श्री जी.बी.जी. कृष्णमूर्ति ने प्रदान किया। सम्मान के पूर्व डॉ. कथूरिया की उपलब्धियों पर प्रकाश डालते हुए पूर्व महापौर एवं दिल्ली हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष श्री महेश चन्द्र शर्मा ने कहा कि भावनगर विश्वविद्यालय, भावनगर (गुजरात) में हिन्दी–विभाग के आचार्य एवं अध्यक्ष रह चुके डॉ. कथूरिया ने माँ भारती की बहुत सेवा की है। वे प्रतिष्ठित समालोचक, सहृदय कवि, प्रखर चिन्तक, गंभीर निबंधकार, निर्भीक पत्रकार, निःस्वार्थ समाजसेवी, कुशल प्रशासक, उत्कृष्ट प्रवचनकर्ता, वैदिक विद्वान, शिष्यवत्सल प्राध्यापक एवं कृतकार्य प्रोफ़ेसर हैं। सम्मेलन के मंत्री डॉ. रवि शर्मा 'मधुप' ने डॉ. कथूरिया का परिचय देते हुए कहा कि मैं डॉ. कथूरिया का शिष्य रहा हूँ। उन्होंने दिल्ली विश्वविद्यालय और इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय में भी लगभग 38 वर्षों तक अध्यापन कार्य किया है। 45 स्तरीय ग्रंथों के यशस्वी लेखक डॉ. सुन्दरलाल कथूरिया बहुभाषाविद् हैं और उन्हें 70 से अधिक सम्मानों–पुरस्कारों से अलंकृत किया जा चुका है। ऐसे कृती विद्वान को **'सम्मानित साहित्यकार'** के रूप में अभिनन्दित करने में सम्मेलन स्वयं को गौरवान्वित अनुभव करता है। डॉ. जी. बी. जी. कृष्णमर्ति के साथ श्री राकेश गुप्ता (प्रबंध निदेशक, साधना टी.वी. चैनल), श्रीमती किरण चोपड़ा (अध्यक्ष, समर्पण एन.जी.ओ.),

श्रीमती इन्दिरा मोहन (महामंत्री, दिल्ली हिन्दी साहित्य सम्मेलन) आदि ने मंच को सुशोभित किया। इस समारोह में बहुत बड़ी संख्या में साहित्यकार, पत्रकार, शिक्षक एवं साहित्य–प्रेमी मौजूद थे।

निर्मल जुगल सेठी मुल्तान डी.ए.वी. सै. स्कूल में मनाया गया

वार्षिक पुरस्कार वितरण एवं डी.ए.वी. राष्ट्रीय खेल प्रतियोगिता समारोह

विद्यालय में सुबह 9.00 बजे से डी.ए.वी. राष्ट्रीय खेल प्रतियोगिता एवं अपराह्न 2.00 बजे से वार्षिक पुरस्कार वितरण समारोह का आयोजन किया गया। समारोह में मुख्य अतिथि श्री टी.आर. गुप्ता (उपाध्यक्ष डी.ए.वी.सी.एम.सी), श्री जे.पी. शूर (निदेशक सहायता प्राप्त स्कूल व पी.एस–1), महापौर श्री योगेन्द्र चंदोलिया, विधायक श्री आर.पी सिंह, पार्षद श्री राजेश भाटिया जी (पार्षद) और श्री के.बी.राय साहनी के अलावा विभिन्न विद्यालयों के प्रधानाचार्य एवं अनेकानेक पूर्व विद्यार्थी उपस्थित थे। डी.ए.वी. राष्ट्रीय खेल के तहत दिल्ली के सभी डी.ए.वी. सहायता प्राप्त विद्यालयों की बैडमिंटन टीमों ने भाग लिया जिसमें एच.एम.डी.ए.वी.सी. सै. स्कूल, दरियागंज, नई दिल्ली ने प्रथम, डी.ए.वी. सी. सै. चित्रगुप्ता रोड़, नई दिल्ली ने द्वितीय एवं मुल्तान डी.ए.वी. सै. स्कूल, ओल्ड राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली ने तृतीय स्थान प्राप्त किया। पुरस्कार वितरण समारोह में वर्ष भर चले शैक्षिक तथा अशैक्षिक कार्यक्रमों में प्रथम तथा द्वितीय स्थान पाने वाले बच्चों को पुरस्कार दिया गया। विद्यालय ने ''राष्ट्र के एकीकरण में विद्यालयों का योगदान'' विषय पर अर्न्तविद्यालयी भाषण प्रतियोगिता का आयोजन किया जिसमें सीनियर वर्ग में दयानंद मॉडल सी.सै. स्कूल मंदिर मार्ग, नई दिल्ली एवं जूनियर वर्ग में पी. जी. डी.ए.वी. सी. सै. स्कूल, पटेल नगर, नई दिल्ली प्रथम रहा।

समारोह का आरम्भ वेद मंत्रोच्चारण एवं जगत वंदना से हुआ। बच्चों ने स्वागत गान गाये एवं विद्यालय के प्रबंधक श्री जे.पी.शूर ने फूलमाओं के द्वारा सभी आगन्तुकों का स्वागत किया। बच्चों ने अन्य रंगारंग कार्यक्रमों की प्रस्तुति दी जिसकी सभी आगन्तुकों ने भूरी–भूरी प्रशंसा की। वन, वृक्षारोपण एवं हरियाली को ध्यान में रखते हुए विद्यालय आगन्तुकों को एक–एक बैम्बू प्लान्ट प्रदान किया। समारोह के मुख्य अतिथि श्री टी.आर. गुप्ता ने अपने सम्भाषण में इस विद्यालय के उतरोत्तर विकास में श्री जे.पी. शूर का अहम योगदान माना एवं कहा कि इनकी वजह से यह स्कूल किसी पब्लिक स्कूल से कम नही है। समारोह के अध्यक्ष श्री जे.पी. शूर (निदेशक सहायता प्राप्त स्कूल व पी. एस.–1) महोदय ने डी.ए.वी. कॉलेज मैनजमेंट कमेटी द्वारा इन विद्यालयों को दिये जाने वाली सहायता की भी चर्चा की एवं आने वाले दिनों में हर जरूरत को पूरा करने का अश्वासन देते हुए कहा कि अब सहायता प्राप्त स्कूल किसी से कम नहीं रहेंगे।

माननीय विधायक श्री आर.पी सिंह ने बच्चों को सफाई अभियान का महत्व समझाया और कहा कि बिजली को बचाकर हम गंगा मैया को बचा सकते हैं। श्री योगेन्द्र चंदोलिया (महापौर) जो विद्यालय के पूर्व छात्र रहे हैं, ने अपने पुराने दिनों को याद किया एवं विद्यालय को हर सम्भव सहायता देने की बात की। श्री

राजेश भाटिया (पार्षद) ने विद्यालय को 21000 रू. की सहायता देने की घोषणा की। पूर्व छात्र श्री जे.एम. चड्डा ने विद्यालय को 11000 रू. का दान दिया एवं भविष्य में भी सहायता करने का आश्वासन दिया। पूर्व शिक्षक श्री अविनाश चन्द्र ने 11000 रू और डॉ लतिका भल्ला ने विद्यालय को 11000 रू. का दान देने का आश्वासन दिया। श्री के.बी. राय साहनी ने अपने सम्भाषण में शिक्षा के क्षेत्र में निर्मल जुगल सेठी के योगदान की चर्चा की और अपने परिवार द्वारा दिए गए 20 लाख रू. के उद्देश्यों को समझाया। अन्त में विद्यालय के प्रधानाचार्य श्री नीरज कुमार सिंह ने देवतातुल्य श्री टी.आर. गुप्ता जी एवं अनुकरणीय श्री जे.पी. शूर जी के निर्देशन में विद्यालय के विकास के लिए और अधिक कार्य करने की बात कही एवं कार्यक्रम की सफलता पर सभी सहकर्मियों का हार्दिक धन्यवाद किया।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601 सम्पादक – **पूनम सूरी**